

'आप जीवन में अवश्य सफल हो सकते हैं!' इस पुस्तक के लेखक, प्रसिद्ध विचारक व अनेक प्रेरणात्मक पुस्तकों के रचयिता जेम्स एलन की यह दृढ़ धारणा है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में, अपने ध्येय में अवश्य सफल हो सकता है। परिस्थितियों और कठिनाइयों को दोष देना निर्बलता का दूसरा नाम है।

परन्तु सफल होने के लिए आपको पूरी लगन से तैयारी करनी होगी और सफलता के आठ साधनों का नियमित अभ्यास करना होगा। इस पुस्तक में सफलता के इन्हीं आठ साधनों की व्याख्या बड़े व्यावहारिक एवं वैज्ञानिक ढंग से स्फूर्तिदायक भाषा में की गई है। कौन जाने यह पुस्तक आपकी जीवन-दिशा बदल दे!

हिन्द पाकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड सस्ते मूल्य पर हिन्दी में उत्कृष्ट मौलिक और अनुवादित पुस्तकें प्रकाशित करने वाली सर्वप्रथम भारतीय संस्था है

सफलता के आठ साधन

जेम्ज एलन



हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटिड
जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली ३२

अनुवादक
महावीर अधिकारी



SAPHALTĀ KE AATH SADHAN : SELF-IMPROVEMENT
JAMES ALLEN
मूल्य एक रुपया

सफलता के आठ साधन

समृद्धि की इमारत नैतिक आधारशिला पर ही खड़ी हो सकती है। बहुधा लोग यह सोचने लगते हैं कि समृद्धि का आधार अनैतिकता —यानी चालबाजी चतुराई धोखाबाजी और लोभ है। बहुधा तथाकथित बुद्धिमान लोग यह घोषणा करते सुने जाते हैं, "कोई भी आदमी व्यापार में तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक वह बेई-मान न हो।" इस प्रकार यह स्वीकार किया जाता है कि व्यापार में समृद्धि (एक अच्छी बात) बेईमानी (एक बुरी बात) का ही प्रतिफल है। ऐसे वक्तव्य को छिछला और विचारहीन ही कहा जा सकता है। मानवीय जीवन के पीछे जो कार्यकारण न्याय है, इस वक्तव्य को उस न्याय का सम्पूर्ण अज्ञान और जीवन के सजीव यथार्थ को ग्रहण करने का ही द्योतक माना जा सकता है। यह तो वही बात हुई कि कोई आदमी बबूल का वृक्ष बोए और आम तोड़ने की इच्छा करे या दलदल में ईंटों का मकान खड़ा करने की कल्पना करे। ये चीजें कारण व असंगत असम्भव हैं इसलिए इनका प्रयास करना अमा-नुषिक है। कार्यकारण न्याय आध्यात्मिक अथवा नैतिक दृष्टि से सिद्धान्त रूप में पृथक नहीं है। प्रकृति में यह रूप-भिन्नता ऊपर से भले ही दृष्टिगोचर होती हो अदृश्य तत्त्वों अर्थात् विचार और कर्म में यह न्याय उसी तरह संश्लिष्ट है जैसे दृश्यमान भौतिक पदार्थों में। अन्तर केवल इतना है कि दृश्यमान पदार्थों में इस प्रक्रिया को व्यक्ति देख सकता है और उसीके अनुकूल आचरण करता है, परन्तु आध्यात्मिक जगत् में इस न्याय-परम्परा को न देख पाकर वह यह कल्पना कर लेता है कि यह निरपेक्ष है एतदर्थ वह उसकी अनुकूलता में कार्य नहीं करता।

लेकिन हम भली भाँति यह जान सकते हैं कि यह आध्यात्मिक प्रक्रिया उतनी ही स्वाभाविक और न्यायसंगत है जितनी कि दृश्यमान भौतिक प्रक्रियाएं। वास्तव में ये वही प्राकृतिक प्रक्रियाएं हैं जो हमारे मानस-जगत् में अभिव्यक्ति पाती हैं। इसी यथार्थ का दिग्दर्शन कराने के लिए सभी महान शिक्षकों ने रूपरेखात्मक कथाएं और उक्तियां प्रस्तुत की हैं। यही तथ्य हमारे सामने रखना शिक्षकों का कर्तव्य है। मानस-लोक ही वस्तुतः दृश्यमान होकर वास्तविक संसार हो जाता है। कुछ दृश्यमान है वही अदृश्यमान का वास्तविक मुकुर है। किसी वृत्त का ऊपर वाला अर्धांश नीचे वाले अर्धांश से किसी भी प्रकार भिन्न नहीं है, उसकी केवल स्थिति भिन्न होती है। इसी प्रकार पदार्थवादी और मानसिक—इस संसार के दो भिन्न वृत्त नहीं हैं वे एक सम्पूर्ण वृत्त के दो अर्धांश-मात्र हैं। पदार्थवादिता और आध्यात्मिकता परस्पर शाश्वत शत्रु नहीं हैं वरन् वास्तविक सृष्टि क्रम में चिरन्तन रूप से उनमें ऐक्य है, इसीलिए जो कुछ अयथार्थता है वह कार्य और गुण के दुर्व्यवहार में है, जहां विभाजन उत्पन्न होता है और सम्पूर्ण वृत्त से पृथक होने की चेष्टा के परिणामस्वरूप बार-बार पीड़ा भोगने के उपरान्त व्यक्ति पुनः उसी सम्पूर्ण वृत्त की ओर प्रत्यावर्तन करता है। पार्थिव जगत् में होने वाली प्रत्येक प्रक्रिया मानसिक जगत् में भी होती है। प्रत्येक पार्थिव विधान के समान आध्यात्मिक विधान भी होता है।

आप किसी भी पार्थिव वस्तु को ले लीजिए यदि आप ठीक प्रकार से खोज करेंगे तो मानसिक जगत् में आपको उसकी आधारभूत प्रक्रिया अवश्य मिल जाएगी। उदाहरणार्थ आप एक बीज के अंकुरण फिर पौधे के रूप में उसकी वृद्धि और अन्तिम विकास के रूप में उसके पुष्प और फिर बीज के रूप में उसके प्रत्यावर्तन को ही लें। ठीक इसी क्रम से मानसिक प्रक्रिया होती है। हमारे विचार बीज हैं और मानस भूमि में बोए जाने के उपरान्त वे उगते हैं और विकास को प्राप्त होते हैं और अच्छे तथा बुरे कार्मों के रूप में पुष्पित होते हैं और अपने गुण एवं प्रकृति के अनुसार पुनः विचारों में बीज रूप को प्राप्त होते हैं ताकि दूसरे मानस-लोकों में उनका वपन किया जा

सके। शिक्षक इन बीजों का वप्ता होता है, अर्थात् आध्यात्मिक कृषक। लेकिन वह जो अपने को स्वयं शिक्षित करता है, अपनी मानस भूमि का बुद्धिमान कृषक कहलाता है। विचार की वृद्धि और पौधे की वृद्धि समानधर्मा हैं। समयानुकूल ही बीज-वपन होना चाहिए। ज्ञानरूपी पादप तथा बुद्धिरूपी पुष्प के विकसित होने के लिए समय अपेक्षित है।

इस स्थल पर रुकना चाहता हूं। अपने वातायन से लगभग सौ गज के अन्तर पर, एक ऊँचे वृक्ष के शिखर पर मेरी दृष्टि जाती है, जहां कि उत्साही पक्षी ने अपना घोंसला बनाया है। शक्तिशाली उत्तरपूर्वी वायु चल रही है। इस झंझावात के वेग से वृक्ष का शिखर जोरों के साथ इधर-उधर झुक रहा है। इसके बावजूद तिनकों और बालों से बने उस क्षुद्र घोंसले को कोई खतरा नहीं है और माता पक्षी तूफान के भय से निर्द्वन्द्व अपने पञ्जों को से रहा है। ऐसा क्यों है? ऐसा इसलिए है कि इस पक्षी ने उन सिद्धान्तों केअनुकूल अपने घोंसले की सृष्टि की है जिनसे अधिकतम शक्ति और सुरक्षा प्राप्त होती है। उसने एक ऐसी जगह को घोंसले का आधार बनाया जहां से दो टहनियां फूटती हैं, दो भिन्न शाखाओं के बीच वाले खाली स्थान को नहीं ताकि हवा का झोंका वृक्ष की चोटी को कितना ही क्यों न झुका दे घोंसले की स्थिति में उससे परिवर्तन न पड़े और उसका ढांचा भी विघटित न हो। तब वृत्ताकार योजना से उसने घोंसले का निर्माण किया ताकि वह बाहरी दबाव के प्रति अधिक से अधिक प्रतिरोध उपस्थित कर सके और अन्दर पूरी तौर पर परिपुष्ट बना रहे। तब उसे विश्वास हुआ कि तूफान चाहे जितना भयानक हो जाए, वह पूरी निश्चिन्तता और सुरक्षा के साथ उसमें विश्राम कर सकता है। यह एक बहुत ही साधारण और सुपरिचित दृष्टान्त है। गणित के नियमानुकूल इसकी सृष्टि होने के कारण बुद्धिमान लोगों के लिए यह एक उपदेशात्मक दृष्टान्त बन जाता है और इस बात को सिखा देता है कि यदि हम नियत सिद्धान्तों के अनुकूल ही कर्म करें तो हमें जीवन की अनिश्चित घटनाओं और भयानक तूफानों के मध्य भी सम्पूर्ण विश्वास सम्पूर्ण सुरक्षा और सम्पूर्ण शान्ति की उपलब्धि हो

पड़ती है।

मनुष्य द्वारा निर्मित आवास अथवा मन्दिर की रचना में पक्षी के घोंसले की अपेक्षा बहुत अधिक कठिनता होती है। परन्तु फिर भी हम उन्हीं गणित के सिद्धान्तों के अनुकूल उनकी रचना करते हैं जोकि हमें पार्थिव जगत् में दीख पड़ते हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि किस प्रकार पार्थिव वस्तुओं के निर्माण में भी मनुष्य सार्वभौम सिद्धान्तों का पालन करने पर बाध्य है। कोई आदमी भूमितिक परिमाणों का उल्लंघन करके इमारतें खड़ी करने का प्रयास नहीं करता क्योंकि वह जानता है कि ऐसी इमारत बनाना खतरे से खाली न होगा और वह यह भी जानता है कि अगर निर्माण के क्रम में इस मरम के मर्म को उसने नहीं पहचाना तो अपरिहार्य रूप से तूफान का पहला झोंका ही इमारत को भूमिसात् कर देगा। मनुष्य अपनी भौतिक इमारत के निर्माण में वृत्त वर्ग और कोण जैसे सुनिश्चित सिद्धान्तों का बराबरतापूर्वक पालन करता है और पैमाना साहुल और परकार की सहायता से एक ऐसा ढांचा खड़ा करता है जो भीषण तूफानों का मुकाबला कर सकता है, और उसी उसे सुरक्षित आश्रय और सुनिश्चित सुरक्षा प्राप्त होती है।

पाठक कहेंगे कि यह तो बहुत साधारण-सी बात है। हां यह मामूली-सी बात है क्योंकि यह सत्य है और सम्पूर्ण है और यह इतनी सत्य है कि यह है युग अपवाद को सहन नहीं कर सकती और इतनी सम्पूर्ण है कि इसमें सुधार करना व्यक्ति की सामर्थ्य से परे है। मनुष्य ने अपनी दीर्घतम अनुभूतियों के उपरान्त पार्थिव जगत् के इन सिद्धान्तों को सीखा और उनके पालन करने की बुद्धिमत्ता प्राप्त की है और मैंने उनका उल्लेख इसलिए किया है कि हमारा ध्यान इस ओर आकृष्ट हो कि मानसिक और आध्यात्मिक जगत् के सिद्धान्त प्रकृति के सिद्धान्तों के समान साधारण हैं और इन्हीं के समान शाश्वत रूप से सत्य और सम्पूर्ण हैं। आज के व्यक्ति उन्हें इतना थोड़ा समझते हैं कि वे नित्यप्रति उनका उल्लंघन करते हैं क्योंकि वे अपनी नासमझी के कारण उनकी प्रकृति से अनभिज्ञ हैं और उस विपत्ति के प्रति चेतन नहीं हैं जिसे कि वे अपने ऊपर हर समय आरोपित करते रहते

हैं।

पदार्थों की तरह मन में वस्तुओं की तरह विचारों में प्राकृतिक प्रक्रियाओं की तरह कर्म में एक ही सुनिश्चित न्याय सन्निहित है और जान-बूझकर या अज्ञानवश उसकी उपेक्षा की जाती है तो परिणाम के रूप में विनाश और पराजय ही प्राप्त होती है। वास्तव में इस न्याय के अज्ञानतापूर्वक उल्लंघन से ही संसार में पीड़ा और दुःख की सृष्टि होती है। पदार्थ में इस न्याय का रूप गणित और मानस में यह न्याय नैतिकता के मूल्यमानों द्वारा परिलक्षित होता है। गणितात्मकता और नैतिकता दो भिन्न और विरोधी वस्तुएं नहीं। वे ऐक्यपूर्ण समग्रता के दो भिन्न पहलू हैं। इन्हींकी मान्यता में पदार्थ जगत् संचालित होता है और वे ही मानव-शरीर में मूर्तिमान होते हैं। आत्मा का वास नैतिकता में है। इस प्रकार नैतिकता के शाश्वत सिद्धान्त गणित के सिद्धान्तों के समान ही यथार्थतापूर्ण हैं। अन्तर केवल इतना है कि वे मानसिक जगत् में काम करते हैं। नैतिक सिद्धान्तों के बिना जीने की कल्पना करना उसी तरह असम्भव है, जिस प्रकार गणित के सिद्धान्तों की उपेक्षा करते हुए सफलतापूर्वक किसी भवन के निर्माण की कल्पना करना। मकानों की तरह चरित्र भी तभी तक दृढ़ता के साथ बने रह सकते हैं जब तक उन्हें नैतिक सिद्धान्तों की आधार शिला पर खड़ा किया जाएगा और उनका निर्माण धीरे-धीरे यत्नपूर्वक एक कर्म के उपरान्त दूसरा कर्म करके किया जाता रहेगा क्योंकि चरित्ररूपी भवन का निर्माण कर्मरूपी ईंटों से ही किया जा सकता है। व्यापार और उसीके साथ समस्त मानवीय कारोबार इस शाश्वत व्यवस्था से निरपेक्ष नहीं रह सकते वरन् वे इन सुनिश्चित सिद्धान्तों का पालन करने से ही दृढ़ और सुरक्षित हो सकते हैं। यदि समृद्धि को सुदृढ़ और स्थायी बनाना है तो नैतिक सिद्धान्तों की आधारशिला पर स्थापित करके दृढ़ चरित्र तथा नैतिक मूल्यों के स्तम्भों पर उसे खड़ा करना होगा। यदि नैतिक सिद्धान्तों का उल्लंघन करते हुए व्यापार का संचालन किया जाएगा तो उसका एक या दूसरे प्रकार के विनाश को प्राप्त होना अनिवार्य है। किसी भी समुदाय के ऐसे लोग ही स्थायी रूप से समृद्धि को प्राप्त होते हैं जालसाज या धोखेबाज

नहीं होते। अंग्रेज जाति में क्वेकर मतावलम्बियों को सबसे अधिक सत्यनिष्ठ स्वीकार किया जाता है और हालांकि उनकी संख्या बहुत थोड़ी है लेकिन वे सबसे अधिक समृद्धिशाली लोग हैं और इसी प्रकार भारत में जैन लोग हैं जो संख्या और गुणों में उन्हीं लोगों के समान हैं और उस देश में सबसे अधिक समृद्ध माने जाते हैं। लेकिन जब हम व्यापार-निर्माण की बात करते हैं तो हमें यह नहीं भूलना है कि वास्तव में यह इमारत ईंटों से बने मकान या पत्थर से बने गिरजाघर का निर्माण करने के ही समान है, हालांकि इस भवन-निर्माण की प्रक्रिया मानसिक है। समृद्धि की तुलना किसी मकान की छत से की जा सकती है जोकि मनुष्य के सिर के ऊपर समस्त सुरक्षाओं और सुखों का संवहन करती है। छत के लिए एक सहारे की जरूरत होती है और सहारा देने वाले स्तम्भ के लिए मजबूत नींव की। इसी प्रकार समृद्धि की छत निम्नलिखित आठ स्तम्भों पर खड़ी हुई है और उसकी नींव में नैतिक स्थिरता का सीमेंट लगा हुआ है। ये आठ स्तम्भ इस प्रकार हैं

१ शक्ति	५ सहानुभूति
२ मितव्ययिता	६ सचाई
३ सत्यनिष्ठा	७ निष्पक्षता
४ क्रम-व्यवस्था	८ आत्मविश्वास

जो व्यापार इन सिद्धान्तों के निर्दोष व्यवहार पर आधारित होगा वह इतना दृढ़ और स्थायी होगा कि उसे कोई जीत न सकेगा कोई चीज उसे हानि न पहुंचा सकेगी कोई चीज उसकी समृद्धि को नष्ट भ्रष्ट न कर सकेगी कोई चीज उसकी सफलता में बाधा उपस्थित न कर सकेगी या उसे भूमिसात् न कर सकेगी। उसकी सफलता जब तक इन सिद्धान्तों का पालन किया जाता रहेगा निर्द्वन्द्व होगी। इसके विपरीत यदि व्यापार में इन सिद्धान्तों का पालन न किया जाएगा तो किसी प्रकार की सफलता प्राप्त करना असम्भव होगा। यह भी हो सकता है कि इस व्यापार में कोई प्रगति न हो। क्योंकि ऐसी कोई चीज उसमें न होगी जो एक अंग का दूसरे अंग से सामंजस्य स्थापित कर सके वरन् उसमें जीवन का अभाव होगा और एकसूत्रता और

स्वामित्व का अभाव होगा। इन्हीं तत्वों द्वारा किसी भी वस्तु को जीवन प्राप्त होता है और उसे देह और स्वरूप प्राप्त होता है, फिर वह चाहे कोई भी चीज हो। आप एक ऐसे आदमी की तस्वीर बनाइए जिसके मन और जीवन में इन सिद्धान्तों का अभाव है। हालांकि इन सिद्धान्तों के बारे में आपकी जानकारी असम्पूर्ण और तुच्छ भले ही क्यों न हो तथापि आप ऐसे आदमी की कल्पना भी नहीं कर सकते जिसे इन सिद्धान्तों के बिना ही अपने काम में सफलता प्राप्त हुई हो। आप केवल उसकी तस्वीर एक ऐसे आदमी के रूप में ही बना सकते हैं जो निरुपाय अकिंचन व्यक्ति की तरह भटकता है। ऐसे आदमी को किसी व्यापारी संस्था के अध्यक्ष या किसी संगठन के सूत्रधार या जीवन के किसी भी विभाग में उत्तरदायी या नियन्त्रणकर्ता का पद प्रदान नहीं किया जा सकता क्योंकि आप जानते हैं कि ऐसा होना असम्भव है। यह एक सचाई है। वांछित नैतिकता और बुद्धि के अभाव की स्थिति में कोई व्यक्ति किसी काम में सफलता प्राप्त कर सकता है—यह कल्पना करने की बात ही नहीं है। उन लोगों को जिन्होंने इस सिद्धान्त की सचाई को पूरी तरह हृदयंगम नहीं किया है, पूरी तरह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि नैतिकता समृद्धि के लिए एक साधन है, बाधा नहीं। इसके विपरीत मान्यता रखना पूरे तौर से गलत है क्योंकि यदि सचाई न हो तो आदमी में जितना ही नैतिक सिद्धान्तों का अभाव हो वह उतना ही अधिक सफलता प्राप्त करता हुआ दिखाई दे।

इसलिए यह सिद्ध हो जाता है कि ये आठ सिद्धान्त आवश्यक रूप से कम या अधिक मात्रा में सफलता की प्राप्ति में साधन के ही रूप में कार्य करते हैं।

यह सत्य है कि अपेक्षाकृत थोड़ी संख्या में आदमी इन सिद्धान्तों पर अमल करते हैं। परन्तु ऐसे भी लोग हैं जो व्यापक और पूर्णरूप से उनपर अमल करते हैं और ऐसे ही लोग नेता, शिक्षक और पथ प्रदर्शक तथा मानव-समाज के स्तम्भ बनते हैं और मानवीय विकास के प्रबल प्रेरक सिद्ध होते हैं। हालांकि बहुत कम लोग इतनी नैतिक सम्पूर्णता को प्राप्त कर पाते हैं कि वह उन्हें सफलता के शिखर पर

नहीं होते। अंग्रेज जाति में अनेक मतावलम्बियों को सबसे अधिक सत्यनिष्ठ स्वीकार किया जाता है और हालांकि उनकी संख्या बहुत थोड़ी है लेकिन वे सबसे अधिक समृद्धिशाली लोग हैं और इसी प्रकार भारत में जैन लोग हैं जो संख्या और गुणों में इन्हीं लोगों के समान हैं और इस देश में सबसे अधिक समृद्ध माने जाते हैं। लेकिन जब हम व्यापार-निर्माण की बात करते हैं तो हमें यह नहीं भूलना है कि वास्तव में यह इमारत ईंटों से बने मकान या पत्थर से बने गिरजाघर का निर्माण करने के ही समान है हालांकि इस भवन-निर्माण की प्रक्रिया मानसिक है। समृद्धि की तुलना किसी मकान की छत से की जा सकती है क्योंकि मनुष्य के सिर के ऊपर समस्त मुसीबतों और दुखों का संवहन करती है। छत के लिए एक सहारे की जरूरत होती है और सहारा देने वाले स्तम्भ के लिए मजबूत नींव की। इसी प्रकार समृद्धि की छत निम्नलिखित आठ स्तम्भों पर खड़ी हुई है और उसकी नींव में नैतिक स्थिरता का सीमेंट लगा हुआ है। ये आठ स्तम्भ इस प्रकार हैं

१ चरित्र	५ सहानुभूति
२ मितव्ययिता	६ सचाई
३ सत्यनिष्ठा	७ निष्पक्षता
४ क्रम-व्यवस्था	८ आत्मविश्वास

जो व्यापार इन सिद्धान्तों के निर्दोष व्यवहार पर आधारित होगा वह इतना दृढ़ और स्थायी होगा कि उसे कोई जीत न सकेगा कोई चीज उसे हानि न पहुँचा सकेगी, कोई चीज उसकी समृद्धि को नष्ट ध्वंस न कर सकेगी कोई चीज उसकी सफलता में बाधा उपस्थित न कर सकेगी या उसे भूमिसात् न कर सकेगी। उसकी सफलता जब तक इन सिद्धान्तों का पालन किया जाता रहेगा निर्द्वन्द्व होगी। इसके विपरीत यदि व्यापार में इन सिद्धान्तों का पालन न किया जाएगा तो किसी प्रकार की सफलता प्राप्त करना असम्भव होगा। यह भी हो सकता है कि इस व्यापार में कोई प्रगति न हो। क्योंकि ऐसी कोई चीज उसमें न होगी जो एक अंग का दूसरे अंग से सामंजस्य स्थापित कर सके वरन् उसमें जीवन का अभाव होगा और एकसूत्रता और

स्थायित्व का अभाव होगा। इन्हीं तत्वों द्वारा किसी भी वस्तु को जीवन प्राप्त होता है और उसे देह और स्वरूप प्राप्त होता है फिर वह चाहे कोई भी चीज हो। आप एक ऐसे आदमी की तस्वीर बनाइए जिसके मन और जीवन में इन सिद्धान्तों का अभाव है। हालांकि इन सिद्धान्तों के बारे में आपकी जानकारी असम्पूर्ण और अस्त भले ही क्यों न हो तथापि आप ऐसे आदमी की कल्पना भी नहीं कर सकते जिसे इन सिद्धान्तों के बिना ही अपने काम में सफलता प्राप्त हुई हो। आप केवल उसकी तस्वीर एक ऐसे आदमी के रूप में ही बना सकते हैं जो निरुपाय अकिंचन व्यक्ति की तरह भटकता है। ऐसे आदमी को किसी व्यापारी संस्था के अध्यक्ष या किसी संगठन के सूत्रधार या जीवन के किसी भी विभाग में उत्तरदायी या नियन्त्रणकर्त्ता का पद प्रदान नहीं किया जा सकता क्योंकि आप जानते हैं कि ऐसा होना असम्भव है। यह एक सच्चाई है। वांछित नैतिकता और बुद्धि के अभाव की स्थिति में कोई व्यक्ति किसी काम में सफलता प्राप्त कर सकता है—यह कल्पना करने की बात ही नहीं है। उन लोगों को जिन्होंने इस सिद्धान्त की सचाई का पूरी तरह हृदयंगम नहीं किया है पूरी तरह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि नैतिकता समृद्धि के लिए एक साधन है बाधा नहीं। इसके विपरीत मान्यता रखना पूरे तौर से गलत है क्योंकि यदि सचाई न हो तो आदमी में जितना ही नैतिक सिद्धान्तों का अभाव हो वह उतना ही अधिक सफलता प्राप्त करता हुआ दिखाई दे।

इसलिए यह सिद्ध हो जाता है कि ये आठ सिद्धान्त कार्यकारण न्याय से कम या अधिक मात्रा में सफलता की प्राप्ति में साधन के ही रूप में कार्य करते हैं।

यह सत्य है कि अपेक्षाकृत थोड़ी संख्या में आदमी इन सिद्धान्तों पर अमल करते हैं। परन्तु ऐसे भी लोग हैं जो व्यापक और पूर्णरूप से उनपर अमल करते हैं और ऐसे ही लोग नेता शिक्षक और पथ प्रदर्शक तथा मानव-समाज के स्तम्भ बनते हैं और मानवीय विकास के प्रबल प्रेरक सिद्ध होते हैं। हालांकि बहुत कम लोग इतनी नैतिक सम्पूर्णता को प्राप्त कर पाते हैं कि वह उन्हें सफलता के शिखर पर

नहीं होते। अंग्रेज जाति में क्वेकर मतावलम्बियों को सबसे अधिक सत्यनिष्ठ स्वीकार किया जाता है और हालांकि उनकी संख्या बहुत थोड़ी है लेकिन वे सबसे अधिक समृद्धिशाली लोग हैं और इसी प्रकार भारत में जैन लोग हैं जो संख्या और गुणों में इन्हीं लोगों के समान हैं और इस देश में सबसे अधिक समृद्ध माने जाते हैं। लेकिन जब हम व्यापार-निर्माण की बात करते हैं तो हमें यह नहीं भूलना है कि वास्तव में यह हमारा ईंटों से बने मकान या पत्थर से बने गिरजाघर का निर्माण करने के ही समान है, हालांकि इस भवन-निर्माण की प्रक्रिया मानसिक है। समृद्धि की तुलना किसी मकान की छत से की जा सकती है क्योंकि मनुष्य के सिर के ऊपर समस्त सुरक्षाओं और सुखों का संवहन करती है। छत के लिए एक सहारे की जरूरत होती है और सहारा देने वाले स्तम्भ के लिए मजबूत नींव की। इसी प्रकार समृद्धि की छत निम्नलिखित आठ स्तम्भों पर खड़ी हुई है और उसकी नींव में नैतिक स्थिरता का सीमेंट लगा हुआ है। ये आठ स्तम्भ इस प्रकार हैं

१ शक्ति	५ सहानुभूति
२ मितव्ययिता	६ सचाई
३ सत्यनिष्ठा	७ निष्पक्षता
४ क्रम-व्यवस्था	८ आत्मविश्वास

जो व्यापार इन सिद्धान्तों के निर्दोष व्यवहार पर आधारित होगा वह इतना दृढ़ और स्थायी होगा कि उसे कोई जीत न सकेगा कोई चीज उसे हानि न पहुंचा सकेगी कोई चीज उसकी समृद्धि को नजर अंदाज न कर सकेगी कोई चीज उसकी सफलता में बाधा उपस्थित न कर सकेगी या उसे भूमिसात् न कर सकेगी। उसकी सफलता जब तक इन सिद्धान्तों का पालन किया जाता रहेगा निर्द्वन्द्व होगी। इसके विपरीत यदि व्यापार में इन सिद्धान्तों का पालन न किया जाएगा तो किस प्रकार की सफलता प्राप्त करना असम्भव होगा। यह भी हो सकता है कि इस व्यापार में कोई प्रगति न हो। क्योंकि ऐसी कोई चीज उसमें न होगी जो एक अंग का दूसरे अंग से सामंजस्य स्थापित कर सके वरन् उसमें जीवन का अभाव होगा और एकसूत्रता और

स्थायित्व का अभाव होगा। इन्हीं तत्वों द्वारा किसी भी वस्तु को जीवन प्राप्त होता है और उस देह और स्वरूप प्राप्त होता है, फिर वह चाहे कोई भी चीज हो। आप एक ऐसे आदमी की तस्वीर बनाइए जिसके मन और जीवन में इन सिद्धान्तों का अभाव है। हालांकि इन सिद्धान्तों के बारे में आपकी जानकारी असम्पूर्ण और कुछ भले ही क्यों न हो तथापि आप ऐसे आदमी की कल्पना भी नहीं कर सकते जिसे इन सिद्धान्तों के बिना ही अपने काम में सफलता प्राप्त हुई हो। आप केवल उसकी तस्वीर एक ऐसे आदमी के रूप में ही बना सकते हैं जो निरुपाय अकिंचन व्यक्ति की तरह भटकता है। ऐसे आदमी को किसी व्यापारी संस्था के अध्यक्ष या किसी संगठन के सूत्रधार या जीवन के किसी भी विभाग में उत्तरदायी या नियन्त्रणकर्ता का पद प्रदान नहीं किया जा सकता क्योंकि आप जानते हैं कि ऐसा होना असम्भव है। यह एक सचाई है। वांछित नैतिकता और बुद्धि के अभाव की स्थिति में कोई व्यक्ति किसी काम में सफलता प्राप्त कर सकता है—यह कल्पना करने की बात ही नहीं है। उन लोगों को जिन्होंने इस सिद्धान्त की सचाई को पूरी तरह हृदयगम नहीं किया है पूरी तरह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि नैतिकता समृद्धि के लिए एक साधन है, बाधा नहीं। इसके विपरीत मान्यता रखना पूरे तौर से गलत है क्योंकि यदि सचाई न हो तो आदमी में जितना ही नैतिक सिद्धान्तों का अभाव हो वह उतना ही अधिक सफलता प्राप्त करता हुआ दिखाई दे।

इसलिए यह सिद्ध हो जाता है कि ये आठ सिद्धान्त कार्यकारण न्याय से कम या अधिक मात्रा में सफलता की प्राप्ति में साधन के ही रूप में काम करते हैं।

यह सत्य है कि अपेक्षाकृत थोड़ी संख्या में आदमी इन सिद्धान्तों पर अमल करते हैं। परन्तु ऐसे भी लोग हैं जो व्यापक और पूर्णरूप से उनपर अमल करते हैं और ऐसे ही लोग नेता शिक्षक और पथ प्रदर्शक तथा मानव-समाज के स्तम्भ बनते हैं और मानवीय विकास के प्रथम प्रेरक सिद्ध होते हैं। हालांकि बहुत कम लोग इतनी नैतिक सम्पूर्णता को प्राप्त कर पाते हैं कि वह उन्हें सफलता के शिखर पर

पहुंचा दे लेकिन जो थोड़ी-बहुत सफलता औरों को प्राप्त होती है वह भी इन्हीं सिद्धान्तों का पालन करने से होती है। ये सिद्धान्त परिणाम की दृष्टि से इतने शक्तिशाली होते हैं कि यदि इनमें से दो या तीन में भी सम्पूर्णता को प्राप्त कर लिया जाए तो सामान्य रूप से समृद्धि प्राप्त करने के लिए वही पर्याप्त है। ऐसे लोग कुछ समय तक स्थानीय प्रभाव पैदा कर सकते हैं और यदि कोई आदमी दो या तीन के पालन में सम्पूर्णता प्राप्त कर ले और शेष में आंशिक कुशलता प्राप्त कर ले तो अपने व्यापार और प्रभाव की इस सीमित सफलता को स्थायी बना सकता है और जैसे-जैसे इन सिद्धान्तों का पालन परिमाण में बढ़ता जाएगा और उनका ज्ञान और व्यवहार बढ़ता जाएगा यह सफलता पूर्णरूप से स्थायी होती जाएगी।

व्यक्ति की नैतिक सीमाएं ही उसकी सफलता की सीमाएं बनती हैं। यह इतनी बड़ी हकीकत है कि व्यक्ति का नैतिक स्तर जान लेने पर इसके आधार पर उसकी अन्तिम सफलता अथवा असफलता को गणित के परिणाम के समान साफ-साफ बताया जा सकता है। समृद्धि का मंदिर नैतिक स्तम्भ के सहारे पर ही खड़ा रह सकता है। ज्यों ज्यों यह स्तम्भ कमजोर पड़ता जाता है मन्दिर की स्थिति असुरक्षित होती जाती है और जिस समय इन स्तम्भों का सहारा पूरी तरह हटा लिया जाता है तो यह मंदिर लुढ़ककर गिर पड़ता है और ध्वस्त हो जाता है। अन्तिम विफलता और पराजय इन्हीं नैतिक सिद्धान्तों की उपेक्षा या उल्लंघन करने से प्राप्त होती है। कार्यकारण न्याय से ऐसा होना अपरिहार्य है। जिस प्रकार आकाश में फेंका हुआ पत्थर पृथ्वी पर लौटकर आता है उसी प्रकार प्रत्येक कर्म—अच्छा और बुरा—अपने कर्ता पर ही लौटकर आता है। प्रत्येक अनैतिक कार्य से लक्ष्य की उपलब्धि में बाधा पड़ती है और इस प्रकार प्रत्येक किए जाने वाले अनैतिक कार्य के अनुपात से लक्ष्य की उपलब्धि दूर से दूर तर होती जाती है। इसके विपरीत प्रत्येक नैतिक कार्य समृद्धिरूपी मंदिर की मजबूत ईंटों का कार्य करता है और सहारा देने वाले स्तम्भ को दृढ़ता और कलात्मक सौंदर्य प्रदान करता है।

व्यक्तियों परिवारों और राष्ट्रों का विकास और समृद्धि उनकी

नैतिक शक्ति और ज्ञान के समन्वय से ही होती है और नैतिक पतन के कारण ही उनका पराभव होता है और उन्हें असफलताएं प्राप्त होती हैं। मानसिक अथवा शारीरिक चाहे जैसी संरचना हो तभी तक स्थायी रूप से खड़ी रह सकती है जब तक कि उसके रूपविधान में पूर्णता हो। अनैतिकता शून्य के समान है। उससे किसी भी वस्तु का निर्माण नहीं किया जा सकता। यह पदार्थ का रिक्त रूप है। अनैतिकता ही विनाश है। इस प्रक्रिया से ही मनुष्य का मन्मीकरण होता है। इन सिद्धान्तों की उपेक्षा से व्यक्ति की शक्तियों का विघटन और पतन होता है। इस प्रकार बिखरी हुई शक्तियों को बुद्धिमत्तापूर्वक पुनः जिस तत्त्व की सहायता से संगठित किया जा सकता है उस बुद्धिमान निर्माता की सत्ता है—नैतिकता। नैतिकता ही तत्त्व और निर्मातृ-शक्ति का संयुक्त रूप है। नैतिकता निर्माण करती है और संजोकर रखती है। यह प्रकृति उस अनैतिकता की विरोधी है जो विपत्ति जननी और विध्वंसकारी है। नैतिकता महान निर्माण का कार्य करती है चाहे वह व्यक्तियों के निर्माण का कार्य हो या राष्ट्रों के।

नैतिकता अजेय है और जो व्यक्ति उसके आधार पर खड़ा होता है वह जैसे एक अखंडनीय चट्टान पर खड़ा होता है इसलिए उसकी पराजय असंभव है। उसकी विजय निश्चित है। ऐसे व्यक्तियों को परीक्षाओं में से गुजरना होता है और ये परीक्षाएं बड़ी से बड़ी परीक्षाएं हो सकती हैं क्योंकि बिना संघर्ष के विजय प्राप्त नहीं होती। संघर्ष से नैतिक शक्तियों में परिपूर्णता आती है। स्थायी सिद्धान्तों का यही स्वाभाविक रूप है। कोई भी वस्तु अपने सौंदर्य और सम्पूर्णता को तब तक प्राप्त नहीं करती है जब तक उसकी शक्ति परीक्षा द्वारा प्रतिष्ठित न हो जाए। वे धातुएं जोकि दुनिया में सबसे अधिक शक्तिशाली और श्रेष्ठ काम में उपयोग की जाती हैं सदैव ही लुहार द्वारा अधिक से अधिक तपाई जाती हैं ताकि उनकी बानु और उनकी शक्ति की परीक्षा हो जाए और वे दुकान पर बनी काम लिए जा सकें। इट पकाने वाला उन ईंटों को उठाकर एक तरफ फेंक देते हैं जो सख्त गर्मी के मुकाबले में ठहर नहीं पातीं। इसलिए यदि किसी आदमी को महान होना है और स्थायी सफलता प्राप्त करनी है तो

उसे विरोधी परिस्थितियों से जूझना होगा। परीक्षा-भूमि में तपकर उसका नैतिक बल दुर्बल न होकर और भी शक्तिशाली एवं सुन्दर रूप में उसे प्राप्त होता है। ऐसे मनुष्य इस्पात की तपी हुई शलाका के समान हो जाते हैं जिसको ऊँचे से ऊँचे काम में लगाया जा सकता है और तब दुनिया जानती है कि संसार का कोई उपयोगी कार्य ऐसा नहीं जिसके लिए उसपर विश्वास न किया जा सके। अनैतिकता पर किसी भी कोने से आक्रमण किया जा सकता है और वे व्यक्ति जो अनैतिकता के आधार पर खड़े होने की चेष्टा करते हैं, दुष्कृत्यों की दल दल में फंस जाते हैं। हालांकि वह व्यक्ति ऊपर से देखने में खड़ा हुआ दिखाई पड़ता है परन्तु शनैः शनैः वह अवसान को प्राप्त होता है। असफलता के रूप में उसकी चरम परिणति अपरिहार्य है। हालांकि अनैतिक व्यक्ति बुरे उपायों से अर्जित अपनी उपलब्धियों पर डींग मारता है लेकिन उसके मनमाने ही उसकी जेब में सुराख हो जाता है। उसका स्वर्ण गिरता जाता है। वे व्यक्ति, जो नैतिकता को अपनाते तो हैं परन्तु परीक्षा की घड़ियों में लोभवश उसे छोड़ देते हैं उन ईंटों के समान हैं जो तपाए जाने पर खण्डित हो जाती हैं। ऐसा व्यक्ति किसी काम का नहीं। दुनिया उसे ठुकरा देती है तथापि आदमी ईंट की तरह जड़ नहीं होता। वह एक जीवित प्राणी है और अपने शेष जीवन में अपनी भूलों का प्रायश्चित करके और उनसे सीख ग्रहण करके वह पुनः अपनी गरिमा को प्राप्त कर सकता है। नैतिक शक्ति में ही सब प्रकार की सफलताओं का निवास है और सभी प्रकार की समृद्धियों में यही चिरस्थायी तत्त्व है। लेकिन सफलताओं की अनेक कोटियां होती हैं और कभी-कभी यह आवश्यक हो जाता है कि एक दिशा में व्यक्ति को असफलता प्राप्त हो ताकि वह अपने को महानता और अधिक चिरस्थायी सफलता की प्राप्ति में संलग्न कर सके। उदाहरण के लिए एक साहित्यिक कलाकार या आध्यात्मिक व्यक्ति धनोपार्जन के उद्देश्य से कार्य आरम्भ करता है। यह आवश्यक है और ऐसा बहुधा होता है कि उसे अपने अभीप्सित उद्देश्य में असफलता प्राप्त हो। परन्तु इससे उसकी प्रतिभा में निखार आता है और वह सफलता के उस गौरवास्पद रूप को प्राप्त करता है जहां उसकी प्रतिभा की वास्त

विक शक्ति सन्निहित होती है। अनेक करोड़पति शेक्सपियर की साहित्यिक सफलता या आध्यात्मिक सफलता की प्राप्ति के लिए अपनी लाखों की सम्पत्ति का सौदा कर सकते हैं और ऐसा करके भी वे यह सोच सकते हैं कि उन्होंने घाटे का सौदा नहीं किया। असाधारण आध्यात्मिक सफलता के साथ समृद्धि बहुधा प्राप्त नहीं होती तथापि आर्थिक सफलता को आध्यात्मिक सफलता की महत्ता और गरिमा की तुलना में तुच्छ ही माना जाएगा। परन्तु इस पुस्तक में मैं उच्चतर अथवा आध्यात्मिक प्रतिभाओं की सफलता की चर्चा न करूंगा वरन् उस सफलता की चर्चा करूंगा जिसका सम्बन्ध सर्वसाधारण के कल्याण और सुख से है। यह सफलता और समृद्धि कमोबेश सम्पत्ति से संबंधित हो सकती है और इस कारण केवल क्षणिक तथा स्वार्थी दोनों प्रकार की हो सकती है। परन्तु इतना निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि समस्त मानव क्रियाओं पर उसका प्रभाव पड़ता है। यह आत्मिक सफलता व्यक्ति और सम्पत्ति में सामंजस्य स्थापित करके उसे वह तत्त्व प्रदान कर सकती है जिसे हम सुख की संज्ञा से पुकारते हैं, और वे साधन प्रदान कर सकती है जिन्हें हम समृद्धि की सत्ता से अभिहित करते हैं। हमें यह अब देखना है कि ये आठ सिद्धान्त इस रहस्य की प्राप्ति के लिए, जो मानव-समुदाय के लिए इतना अधिक प्रेय है किस प्रकार काम करते हैं और उनके आधार पर किस प्रकार समृद्धि की छत रोपी जा सकती है और उसको सहारा देने वाले स्तम्भों पर सुरक्षित रखी जा सकती है।

न दुर्गुणों का। वह पूरी तरह बंजर, शून्य और निष्फल होती है। वह व्यक्ति—जो अपनी शक्ति को बुरे कर्म में लगाता है—कम से कम अपने एक गुण को तो अक्षुण्ण रखता है और वह गुण है कर्मठता का। वही शक्ति जिसका उपयोग वह स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों की पूर्ति के लिए करता है, उसके सिर पर संकटों पीड़ाओं और दुखों का घटाटोप ला देगी और अपने अनुभवों के सहारे वह अपने कर्म को बदलने पर बाधित हो जाएगा। उचित समय पर जब उसके मन की आँखें सद्गुणों को देखने में सफल हो सकेंगी तो वह अपने जीवन पर सिंहावलोकन करेगा और अपनी शक्ति के प्रयोग के लिए नवीन और उचित धाराओं का अनुसंधान करने में सफलता प्राप्त करेगा। तब वह व्यक्ति शुभ की साधना में भी उतना ही उत्कृष्ट दुर्धर्ष सिद्ध होगा जितना अशुभ की प्राप्ति में। इस पुरानी कहावत में यह सत्य कितने सुन्दर रूप में व्यक्त हुआ है—'जितना बड़ा पापी उतना बड़ा सन्त।'

शक्ति ही सामर्थ्य है। इसके बिना दुनिया में किसी भी सफलता की प्राप्ति संभव नहीं। इसके बिना सद्गुणों की प्राप्ति भी असंभव है। अशुभ से दूर रहना ही सद्गुण नहीं है। सद्गुण का वास सत्कर्म में ही है। कुछ ऐसे भी लोग होते हैं जो सत्कर्म करने की चेष्टा करते हैं किन्तु शक्ति के अभाव के कारण असफल रह जाते हैं। उनके प्रयत्न इतने शिथिल होते हैं कि उनका कोई सुस्पष्ट परिणाम नहीं निकलता। ऐसे लोग कुटिल नहीं होते और जान-बूझकर किसी को हानि नहीं पहुँचाते इसलिए उन्हें बहुधा अच्छा आदमी माना जाता है। पर वे जीवन में असफलता का ही वरण करते हैं। क्योंकि हानि पहुँचाने की असमर्थता को अच्छाई नहीं कहा जा सकता। यह तो दुर्बल और निष्प्राण होने का लक्षण है। वही व्यक्ति वास्तव में शक्तिशाली होता है जो हानि पहुँचाने की सामर्थ्य रखते हुए भी अपनी शक्तियों को सत्कर्म में ही लगाता है। इसलिए जब तक व्यक्ति पर्याप्त मात्रा में शक्ति का स्वामी नहीं होता तब तक उसे नैतिक बल प्राप्त नहीं हो सकता। उसी प्रकार जैसे बिना नियामक शक्ति के किसी भी रत्न में चमक नहीं आती उसकी अच्छाई अस्पष्ट और सुषुप्त ही रहेगी उसका प्रकाशन नहीं होगा।

जीवन के प्रत्येक विभाग में शक्ति ही कर्म की सूचक है; कर्म चाहे पार्थिव हो अथवा आध्यात्मिक। इसलिए कर्म का आह्वान—चाहे वह किसी सैनिक के द्वारा किया गया हो किसी शिक्षक के माध्यम द्वारा अथवा नेताओं से निकला हो—हमें अपनी सोई शक्तियों को जगाने की प्रेरणा देता है और हाथ में आए काम को शीघ्रता के साथ करने की चेतावनी देता है। सभी चिन्तक और विचारक अपने शिष्यों को सदैव ही मनन-चिन्तन में चेष्टापूर्वक रत रहने की प्रेरणा देते रहते हैं। जीवन के सभी क्षेत्रों में शक्ति समान रूप से इष्ट है। केवल सैनिक इंजीनियर या व्यापारी के लिए ही कर्म करने का विधान नहीं है। उद्धारकों ज्ञानियों और सन्तों के उपदेशों में सभी के लिए कर्म करने की प्रेरणा होती है।

एक महान गुरु ने अपने शिष्य को सदैव 'जागरूक रहने' की शिक्षा दी। इस शिक्षा में यही प्रेरणा निहित है कि यदि मनुष्य अपने लक्ष्य को सिद्ध करना चाहता है तो उसके लिए शक्ति का निरन्तर उपयोग करना आवश्यक है। यह नेक सलाह सैनिक और सन्त दोनों के ही लिए समान रूप से उपयोगी हो सकती है। 'स्वाधीनता का मूल्य है निरन्तर कर्मतत्परता और स्वाधीनता की प्राप्ति ही मनुष्य का अन्तिम लक्ष्य है। उसी शिक्षक का कथन है—"यदि मनुष्य को कर्म करना है तो उसे उद्यम करना चाहिए और तत्परता के साथ सम्पन्न करना चाहिए।" इस उपदेश का मर्म यही है कि कर्म ही शक्ति है और उपयुक्त उपयोग के द्वारा उसमें वृद्धि और विकास किया जा सकता है। जितनी शक्ति हमें प्राप्त है उसमें वृद्धि के लिए भी उसका उपयोग आवश्यक है। जिसके पास है उसीको और मिलता है। जो पराक्रमी है शक्ति और स्वाधीनता उसीको प्राप्त होती है।

किन्तु यदि शक्ति को सृजनात्मक होना है तो केवल उद्देश्य की पूर्ति में उसे लगाना ही काफी नहीं है सावधानी के साथ उसे नियंत्रित और सुरक्षित रखा जाना भी अनिवार्य है। आधुनिक युग में शक्ति को सुरक्षित रखने में जो प्रधानता दी जाती है, उससे प्रकृति के उस नियम की पुष्टि होती है कि शक्ति का कभी ह्रास अथवा हानि नहीं

लोग उसके पीछे दौड़ते हैं किन्तु वह स्वयं जो दिन-रात दौड़-धूप करता है, परेशानी उठाता है और अपने काम को शीघ्रता के साथ सिद्ध करना चाहता है, (इन बातों को भ्रमवश वह यथेष्ट होना मानता है) कभी कामयाबी का मुंह नहीं देख पाता वरन् लोग उसकी शक्ल से बेजार दिखाई देते हैं। परन्तु उसे मालूम नहीं होता कि उसका पड़ोसी आराम-तलब नहीं है वह समझदारी के साथ काम करता है अधिक काम करता है उसे अधिक कुशलता के साथ करता है और उसमें अधिक आत्मानुशासन और धीरजमता है। उसकी सफलता और उसके प्रभाव का यही रहस्य है। उसकी शक्तियां नियन्त्रित हैं और उपयोग में आती हैं जबकि दूसरे व्यक्ति की शक्तियां छिन्न भिन्न रहती हैं और उनका दुरुपयोग होता है।

इसीलिए शक्ति समृद्धि के मन्दिर का प्रथम स्तम्भ है। इस प्रथम और आवश्यक उपादान के बिना समृद्धि प्राप्त होना सम्भव नहीं। शक्ति के बिना क्षमता प्राप्त नहीं होती और न ही योग्यता आत्म-सम्मान और स्वाधीनता प्राप्त होती है। बेकार लोगों में अधिकांश लोग इसीलिए बेकार होते हैं क्योंकि उनमें शक्ति नहीं होती। वह आदमी जो घंटों तक जेब में हाथ डाले हुए चुरुट पीता हुआ इस बात की प्रतीक्षा में खड़ा रहता है कि कोई आएगा और उसे एक बीयर का गिलास पीने के लिए निमन्त्रित करेगा मुश्किल से ही अपने लिए काम खोजने में सफल हो सकता है। अगर उसे काम मिलता तो वह शायद ही उसे स्वीकार करता। शारीरिक रूप से पृथुल और मानसिक रूप निष्क्रिय ऐसा आदमी उत्तरोत्तर इन दुर्गुणों में वृद्धि करता जाता है। वह उत्तरोत्तर अपने को काम के अयोग्य एतदर्थ जीने के अयोग्य बनाता जाता है। शक्तिशाली आदमी अस्थायी समय के लिए बेकारी और परेशानी में से गुजर सकता है लेकिन हमेशा के लिए उसका बेकार रहना असम्भव है। उसे या तो काम मिल जाएगा या उसे वह पैदा कर लेगा क्योंकि निष्क्रियता उसे पीड़ा पहुंचाती है काम उसे प्रफुल्लित करता है, और ऐसा आदमी जिसे काम करने में सुख का अनुभव होता है, अधिक समय तक बेकार नहीं रह सकता।

अकर्मण्य आदमी किसी काम में लगाना ही नहीं चाहता। बिना काम किए ही उसकी प्रतिभा मुखर होती है। उसकी सबसे बड़ी खोज यही रहती है कि काम से किस प्रकार गर्दन छुड़ाई जाए। विश्रामस्वरूप ही उसकी खुशी है। यदि ऐसा आदमी किसी समाजवादी को भी मिल जाए—जो सब तरह की बेकारी ध्येय अनावश्यक लोगों को घट है तो वह भी ऐसे काहिल आदमी को बरदाश्त किए बगैर न रहेगा। कामचोर और निकम्मे आदमी को कौन काम पर रखेगा ? ऐसे ही बेकारों की सेना बड़ी होती जाती है। अकर्मण्यता इतनी निम्न कोटि की बुराई है जिससे सभी श्रमशील और सही विचारों वाले लोग घृणा करते हैं।

परन्तु शक्ति तो एक संगठित बल है। वह एकाकी नहीं रहती। इसमें वे गुण भी सम्मिलित रहते हैं जो चरित्र को बलवान बनाते हैं और समृद्धि की सृष्टि करते हैं। मुख्य रूप से ये विशेषताएं निम्नलिखित उपादानों में प्राप्त होती हैं

१ तत्परता	३ उद्यम
२ सतर्कता	४ श्रमनिष्ठा

शक्ति के स्तम्भ में ये चार चीजें कंक्रीट की तरह लगी हुई हैं। इन तत्त्वों में दृढ़ता एवं स्थायित्व और चारों ओर से जबर्दस्त आघात को सहन करने की शक्ति है। इन्हीं के समायोग से जीवन सामर्थ्य क्षमता और प्रगति का निर्माण होता है।

तत्परता हमारी सबसे मूल्यवान सम्पत्ति है। इसके द्वारा विश्वसनीयता प्राप्त होती है। वे लोग जो सदैव जागरूक रहते हैं तत्काल कर्मरत हो जाते हैं और जो समय के पाबन्द हैं वे सर्वत्र विश्वास के पात्र समझे जाते हैं। वे मालिक जो स्वयं कार्यतत्पर होते हैं अपने कर्मचारियों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनते हैं और काम की उपेक्षा करने वालों के लिए अंकुश का काम करते हैं। वे पूरे-पूरे अनुशासन का भी साधन बनते हैं। इस प्रकार अपनी उपयोगिता और सफलता में अभिवृद्धि करने के साथ-साथ वे दूसरों की कार्यक्षमता और सफलता के भी साधन बनते हैं। एक आलसी कार्यकर्ता हमेशा ही अपने काम को भविष्य के लिए स्थगित करता जाता है पर समय के

पीछे पिछड़ता जाता है और इस प्रकार अपने लिए ही नहीं दूसरों के लिए भी विक्षोभ का कारण बनता है। उसकी सेवाओं का कोई आर्थिक मूल्य नहीं समझा जाता। कार्य के प्रति उत्साह और उसे शीघ्रता से सम्पन्न करना कार्य-तत्परता के दो प्रमुख उपादान हैं जो समृद्धि की प्राप्ति में उपयोगी बनते हैं। सामान्य काम-धन्धे में भी जागरूकता रखने से क्षमताओं का सदुपयोग होता है और कार्य तत्परता से सिद्धि मिलती है। कार्य को कल के लिए स्थगित करने वाला आदमी व्यापार में कभी सफल सिद्ध नहीं होता। मुझे इस प्रकार सफलता प्राप्त करने वाला आदमी आज तक नहीं मिला जबकि असफल होने वालों में बहुतों को मैं जानता हूं।

सतर्कता हमारी समस्त क्षमताओं और मानसिक शक्तियों के प्रहरी का काम करती है यह एक ऐसा पुष्टधर है, जोकि हिंसात्मक और विध्वंसात्मक तत्वों के प्रवेश को वर्जित करता है। यह सफलता स्वाधीनता और बुद्धिमत्ता की संरक्षक और निकट सहयोगी है। जिसका मानस सतर्क नहीं वह आदमी मूर्ख है और मूर्खों को कभी समृद्धि नहीं प्राप्त होती। भावनाओं के आवेश में बहकर मूर्ख व्यक्ति अपने मन पर अधिकार खो बैठता है और इस प्रकार अपनी गम्भीरता गरिमा और निर्णयबुद्धि को घटिया विचारों द्वारा नष्ट कर देता है। वह कभी अपने हित के प्रति सतर्क नहीं रह पाता और उसके मन के द्वार सभी अनिष्ट कार्यों एवं आकांक्षाओं के लिए खुले होते हैं। वह इतना दुर्बल और अस्थिर होता है कि किसी भी भावनात्मक झोंके से प्रभावित हो जाता है। वह उन्हीं बातों का उदाहरण होता है कि लोगों को कैसा होना चाहिए। वह हमेशा ही असफल होता है। एक मूर्ख व्यक्ति सभ्यता का सशरीर व्याघात है और समाज में उसे कहीं भी आदर प्राप्त नहीं होता। जिस प्रकार शक्ति की चरम परिणति बुद्धिमत्ता में होती है उसी प्रकार मूर्खता की चरम परिणति दुर्बलता में होती है।

विचारहीनता और जीवन के समस्त कार्यव्यापार में ढीलापन असतर्क रहने के ही स्पष्ट दुष्परिणाम होते हैं। विचारहीनता ही ता का दूसरा नाम है।

विचारहीनता के परिणामस्वरूप असफलताएं और विपत्तियां ही हमें प्राप्त होती हैं। उपयोगिता और समृद्धि को लक्ष्य बनाकर चलने वाले लोग अपनी क्रियात्मकता की तरफ से बेखबर नहीं रह सकते। उन्हें यह भी भली भांति विदित होना चाहिए कि मनुष्य के कार्यों का स्वयं उन्हीं पर और चारों तरफ के समाज के जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है। अपना जीवन-यात्रा प्रारम्भ करते समय हमें अपने व्यक्तिगत दायित्वों के प्रति जागरूक रहना चाहिए। व्यक्ति को यह जानना चाहिए कि वह चाहे अपने घर में हो चाहे किसी व्यापार-संस्था के मंच पर, मालगोदाम में विद्यालय में अपने मित्रों की संगति में अथवा एकाकी हो—सभी जगह अपने आचार-व्यवहार का एक स्पष्ट प्रभाव छोड़ता है और उसकी जीवन-वृत्ति पर इस प्रभाव का अच्छा या बुरा किसी एक प्रकार का असर जरूर पड़ता है। आचार-व्यवहार का एक ऐसा अज्ञात प्रभाव होता है जो एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से मिलते समय—चाहे दूसरा पुरुष हो महिला हो या बच्चा—उसपर छोड़ता ही है। इन्हीं प्रभावों के आधार पर लोगों का पारस्परिक सम्बन्ध और भावनाएं बनती हैं। यही कारण है कि सभ्य समाज में शालीन व्यक्तियों को प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। यदि आपका मस्तिष्क नकारात्मक और उद्विग्न होगा तो उसका ज़हर आपके कामव्यापार को विपत्ति में डालेगा। यह अनिष्ट प्रभाव आपके अपने प्रयत्नों को निष्फल करेगा और आपकी सुख और समृद्धि में व्याघात करेगा। उसी प्रकार, जैसे तीव्र अम्ल बढ़िया से बढ़िया इस्पात को जर्जर कर देता है। इसके विपरीत यदि आपके व्यक्तित्व से विश्वसनीय और मस्तिष्क से श्रेष्ठता का भाव झलकेगा तो दूसरे लोग आपकी तरफ आकर्षित होंगे और बिना जाने ही आपके प्रति सद्भावना रखेंगे। इस सद्गुण से आपको सभी लोगों का शक्तिशाली सहयोग प्राप्त होगा। आपको मित्र और अवसर प्राप्त होंगे और जिस किसी कार्य को आप हाथ में लेंगे उसमें सफल होने में सहायता प्राप्त होगी। इससे आपकी भूलों का परिष्कार होगा और जो छोटी-मोटी अयोग्यताएं आपके व्यक्तित्व में हैं उनकी क्षतिपूर्ति होगी और अनेक दोष विमुख हो जाएंगे।

इस प्रकार दुनिया को हम जितना देते हैं उतने ही परिमाण में दुनिया से हमें प्राप्त होता है। बुरा करने से बुरा और अच्छा करने से अच्छा फल प्राप्त होता है। यदि आचरण त्रुटिपूर्ण है तो आपका प्रभाव क्षीण होगा और सफलता भी अधूरी होगी। यदि आपका चरित्र श्रेष्ठ होगा तो आपको स्थायी शक्ति मिलेगी और आप सफलता के शिखर पर पहुँचेंगे। हम काम करते हैं और दुनिया उसका हमें प्रतिदान देती है। मूर्ख जब असफल होते हैं तो एक-दूसरे पर ही दोषारोपण करते हैं परन्तु बुद्धिमान आदमी अपनी त्रुटियों पर दृष्टिपात करता है और उनमें परिष्कार करता है और इस प्रकार सफलता का भागी बनता है।

सतर्क और जागरूक मस्तिष्क वाला व्यक्ति अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सक्षम होता है और यदि वह सदैव समस्त परिस्थितियों में जागरूक और चौकन्ना रहता है और चरित्र के दोषों में परिष्कार करता है तो दुनिया की कोई परिस्थिति अथवा शत्रु उसे परास्त नहीं कर सकते और दुनिया की कोई शक्ति उसके उद्यम की उपलब्धि में बाधा नहीं डाल सकती।

उद्यम से हमारे जीवन में प्रफुल्लता और प्राचुर्य का आविष्कार होता है। उद्यमी लोग ही समाज में सबसे अधिक सुखी पाए जाते हैं। वे हमेशा सबसे अधिक सम्पत्तिवान लोग भले ही न हों लेकिन उनका हृदय सदैव प्रसन्न और हलका रहता है और जो कुछ वे करते हैं या जो कुछ उन्हें प्राप्त होता है उसीमें वे संतोष का अनुभव करते हैं। इस दृष्टि से वे सबसे अधिक सम्पत्तिवान लोग कहे जा सकते हैं क्योंकि उन्हें सबसे अधिक प्रसन्नता प्राप्त होती है। उद्यमी लोग कभी अकर्मण्यों के समान केवल सोचने-मात्र में अथवा अपनी व्याधियों और विपत्तियों को एक स्थायी व्यक्ति की तरह बढ़ा चढ़ा कर नहीं बताते। यह देखने की बात है कि उन्हीं चीजों पर सबसे अधिक चमक होती है जो सबसे अधिक व्यवहार में लाई जाती हैं। इस प्रकार वे व्यक्ति जो सदैव उद्यम करते हैं, उनका मुखमण्डल दीप्त रहता है और उनकी आत्माओं में तेज होता है। जो चीजें व्यवहार में नहीं लाई जातीं उनपर जंग लग जाता है। समय का हनन करने

वाले व्यक्ति का चित्त उद्विग्न रहता है और दुष्कल्पनाओं में फँसा रहता है। जो व्यक्ति अकर्मण्यता में ही जीवन की सार्थकता मानते हैं वे एक तरह से अपनी नपुंसकता की ही घोषणा करते हैं। क्योंकि दुनिया ज्ञान और उपयोगी वस्तुओं से इतनी सम्पन्न है और हमारी जीवन अवधि इतनी अल्प है कि हम कभी भी फालतू समय का औचित्य सिद्ध ही नहीं कर सकते। विचारशील मस्तिष्क और संवेदनशील हृदय वाले लोग जीवन के प्रत्येक क्षण को उपयोगी और सुखी बना सकते हैं और यदि वह कभी समय की चर्चा करते भी हैं तो केवल यही कि उनके पास समय इतना थोड़ा है और जीवन में करने के लिए काम इतना अधिक है कि सांस लेने का अवकाश भी नहीं मिलता।

उद्यम से स्वास्थ्य और समृद्धि में वृद्धि होती है। उद्यमी आदमी सदैव थककर अपनी शय्या में प्रवेश करता है। इसलिए उसका विश्राम सम्पूर्ण और मधुर होता है और प्रत्येक अगले दिन प्रातःकाल शय्या त्याग करते समय वह तरोताजगी और शक्ति का अनुभव करता है और अगले दिन के आह्लादकारी कर्तव्य के प्रति वह सन्नद्ध होता है। उसकी भूख और पाचन-शक्ति दुरुस्त रहती है। मनोरंजन से उसे स्फूर्ति मिलती है और उद्यम से उसे शान्ति प्राप्त होती है। इस आदमियों का भला दुःख और दैन्य से क्या वास्ता हो सकता है। ऐसी अशोभन भावनाएं तो उन्हीं लोगों को घेरे रहती हैं जो कम परिश्रम करते हैं लेकिन पेटू की तरह डटकर खाते हैं। समाज में जो लोग अपनी उपयोगिता सिद्ध करते हैं, वे दैनिक जीवन में एक उत्सुकता का आविष्कार करते हैं और दुनिया को गति प्रदान करते हैं।

ध्येयनिष्ठा—एक महान चिंतक का कथन है कि ध्येयनिष्ठा अमरत्व का पथ है। जिन लोगों की अपने ध्येय में निष्ठा होती है, वे कभी मरण को प्राप्त नहीं होते और जिनमें निष्ठा नहीं होती वे जीवित ही मृतक के समान होते हैं। सम्पूर्ण मस्तिष्क का किसी कार्य में लगाना ही ध्येयनिष्ठा है। जो काम हम करते हैं वस्तुतः वही हमारा जीवन होता है। ध्येयनिष्ठ लोग तब तक किसी कार्य को करके सन्तोष का अनुभव नहीं करते जब तक उन्हें उसमें उच्चतम

सफलता प्राप्त नहीं हो पाती और ऐसे ही व्यक्ति श्रेष्ठता प्राप्त करते हैं। ऐसे लोग दुनिया में बहुत हैं जो लापरवाह होते हैं और अधूरे मन से काम करते हैं और अपने छोटे कारनामों पर खिन्न रहते हैं। उनके मुकाबले में ध्येयनिष्ठ लोग अलग ही चमकते हैं। ध्येयनिष्ठ लोगों के लिए हमेशा ही बहुत काम होता है। कोई भी ध्येयनिष्ठ पुरुष अथवा महिला ऐसे नहीं होते जिन्हें जीवन में उच्च पद प्राप्त न हो। ऐसे लोग कर्तव्यपरायण और उद्यमी होते हैं और जब तक वे अपने कार्य को श्रेष्ठतम रूप से नहीं कर लेते तब तक उन्हें चैन नहीं पड़ता। सारी दुनिया उनके श्रमों को पुरस्कृत करने के लिए बेचैन रहती है। यह पुरस्कार चाहे पारिश्रमिक के रूप में हो या सम्पत्ति ख्याति मित्रता प्रभाव सुख-सुविधा या जीवन-समृद्धि के रूप में और साधना चाहे पार्थिव बौद्धिक या आध्यात्मिक हो।

ध्येयनिष्ठ लोग अपने कर्म और चरित्र में सदैव ही सत्वर प्रगति करते हैं। इसी आधार पर वे जीवित रहते हैं और मरते नहीं। क्योंकि अवरोध ही मृत्यु है और जहां सतत प्रगति और सदैव दृढ़ता की ओर उन्मुख कार्यकुशलता है, वहां अवरोध और मृत्यु को स्थान नहीं मिल सकता।

इस प्रकार इस प्रथम स्तम्भ का निर्माण होता है। जो व्यक्ति इसका निर्माण अच्छी तरह करता है और दृढ़तापूर्वक उसे स्थापित करता है वह जीवन के प्रत्येक कार्यव्यापार में सदैव शक्तिशाली और स्थायी सहयोग प्राप्त करता है।

२ | मितव्ययिता

प्रकृति के बारे में यह कहा जाता है कि उसमें शून्यता नहीं होती। प्रकृति के किसी तत्त्व का अपव्यय नहीं होता। प्रकृति के अलौकिक विधान में प्रत्येक वस्तु सुरक्षित रहती है और उसका सदुपयोग होता है। यहां तक कि मल-मूत्र भी रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा परिवर्तित हो जाता है और नया रूप धारण कर लेता है। प्रकृति गन्दगी का विनाश सीधे विध्वंस द्वारा नहीं बल्कि उन तत्त्वों का कायाकल्प करके उन्हें मधुर और पवित्र बनाकर करती है ताकि सत्, चित् और आनन्द का लोक में आविष्कार हो सके।

प्रकृति में जो मितव्ययिता है उसे एक सार्वभौम सिद्धान्त माना जा सकता है। मितव्ययिता आदमी के लिए नैतिक सद्गुण है—जिसकी सहायता से वह अपनी शक्तियों को सुरक्षित रख पाता है और अपने चारों तरफ से सामाजिक जीवन में एक कार्यशील घटक के रूप में अपने स्थान को सुरक्षित रखता है।

आर्थिक मितव्ययिता तो इस सिद्धान्त का केवल एक अंश-मात्र है, वरन् कहना चाहिए कि यह तो उस यथार्थ अर्थविधान का—जोकि पूर्ण रूप से मानसिक है और जिसकी अभिव्यक्ति आध्यात्मिकता में होती है—केवल एक पार्थिव प्रतीक-मात्र है। एक अर्थविशेषज्ञ तांबे को चांदी में बदला करता है, चांदी को सोने में और सोने का मोतियों में परिवर्तन करता है और इन मोतियों के सहारे वह अपने बैंक-खाते में वृद्धि करता है। पैसे का इन रूपों में परिवर्तन करके वह अपने

कार्यव्यापार-सम्बन्धी धार्मिक प्रबन्ध में सफलता प्राप्त करता है आध्यात्मिक अर्थशास्त्री अपनी भावनाओं को बुद्धिमत्ता में परिवर्तित करता है, बुद्धिमत्ता को सिद्धान्तों में परिवर्तित करता है और सिद्धान्तों की अभिव्यक्ति उसके कर्म से होती है और ऐसे बुद्धिमत्ता पूर्ण कार्यों में अद्भुत प्रभाव होता है। इस प्रकार के परिवर्तन से वह अपने चरित्र निर्माण और जीवन-व्यवस्था में कौशल प्राप्त करता है।

वास्तविक मितव्ययिता सब चीजों में मध्यम मार्ग को ग्रहण करने में है चाहे मार्ग भौतिक हो या मानसिक। सम्पत्ति का अपव्यय या अनुचित अवरोध इन दोनों के मध्य का मार्ग ही मितव्ययिता है। चाहे पैसा हो या मानसिक शक्ति यदि उसका अपव्यय किया जाएगा तो धन-धन शक्तिहीन हो जाएगा और यदि स्वार्थवश इसे अपने पास जमा किया जाएगा तो भी वह शक्तिहीन हो जाएगा। भूमिगत या मानसिक कैसी भी सत्ता। हमें क्यों न प्राप्त करनी हो उसीके लिए उचित साधनों का संचय किया जाना अनिवार्य है परन्तु संचय के उपरान्त उन्हें उचित उपयोग में लाना चाहिए। द्रव्य अथवा शक्ति का संचय करना तो केवल एक साधन है। साध्य उपयोग में है। उपयोग से ही शक्ति प्राप्त होती है। निम्नलिखित सात चीजों के मध्यम मार्ग को अपनाना ही सम्पूर्ण मितव्ययिता प्राप्त करना है

१ पैसा २ भोजन ३ वस्त्र ४ मनोरंजन ५ आराम ६ समय एवं ७ शक्ति।

पैसा परिवर्तन का प्रतीक है और उससे हमारी क्रय-शक्ति का बोध होता है। वह व्यक्ति जो सम्पत्ति प्राप्त करना चाहता है और वह व्यक्ति भी जो अपव्ययी नहीं होना चाहता उसका यह फर्ज है कि वह इस बात का ध्यान करे कि किस प्रकार अपने व्यय को आय के अनुरूप बनाता है ताकि उसकी कार्यकारी पूंजी में सदैव अभिवृद्धि होती रहे या जिसके द्वारा किसी भी संकटापन्न स्थिति का सामना करने के लिए उसके हाथ में कुछ जमा-पूंजी हो। वह पैसा जोकि विचारहीन खरीदारी और निरर्थक आमन्द या हानिकारक भोग विलास की वस्तुएं प्राप्त करने के लिए व्यय किया जाता है, वस्तुतः

अपव्यय ही किया जाता है। इससे हमारी शक्ति का विनाश होता है। क्योंकि पैसे में चाहे सीमित शक्ति हो और वह शक्ति निम्न श्रेणी की ही क्यों न हो लेकिन साधन प्राप्त करना और उसका उचित और पवित्र वस्तुओं के क्रय करने में व्यय करना ही उचित है। पैसा आखिर एक शक्तिशाली साधन अवश्य है और हमारे दैनिक जीवन में उसका एक स्पष्ट उपयोग है। एक फिजूलखर्च आदमी कभी मालदार नहीं हो सकता और वह मालदार होकर फिजूलखर्च बनता है तो बहुत शीघ्र ही गरीब हो जाता है। इसी प्रकार बहुत सा माल-दौलत जोड़कर रखने वाला कंजूस आदमी भी मालदार नहीं कहा जा सकता क्योंकि वह स्वयं भी अभावग्रस्त होता है और उसका व्यर्थ पड़ा हुआ धन उसको कार्य करने की शक्ति से वंचित कर देता है। दूरदर्शी और समझ-बूझकर खर्च करने वाले लोग समृद्ध होते हैं। वे बुद्धिमत्तापूर्वक व्यय करते हैं और सावधानी के साथ बचाते हैं। इस प्रकार वे अपने क्षेत्र का विस्तार करते हैं।

जो गरीब आदमी मालदार बनना चाहता है, उसे सबसे नीचे के स्तर से अपना प्रयत्न शुरू करना है। उसे अपनी सामर्थ्य के बाहर साधन-सम्पन्नता दिखाने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। निम्नतम धरातल पर ही उन्नति और स्थान की सुविधा हो सकती है और प्रारम्भ करने के लिए यही सबसे अधिक सुरक्षित स्थान है, क्योंकि इससे नीचे कुछ भी नहीं है। सब कुछ ऊपर ही ऊपर है। बहुत-से नये व्यापारी फिजूलखर्ची और दिखावट में पड़कर अपने लिए दुःख और विपत्ति का संचय करते हैं क्योंकि वे यह समझते हैं कि सफलता के लिए इन चीजों का होना जरूरी है, लेकिन यह मार्ग आत्मप्रवंचना और आत्मविनाश का ही मार्ग है। किसी वस्तु को संतुलित और वास्तविक रूप में आरम्भ करके ही सफलता को सुनिश्चित बनाया जा सकता है न कि अपने स्वभाव और महत्त्व का प्रचार-प्रसार विज्ञापन करके। जितनी थोड़ी पूंजी हो उतना ही थोड़ा कार्यक्षेत्र होना चाहिए। पूंजी और क्षेत्र की तुलना हाथ और दस्ताने से की जा सकती है। इन दोनों चीजों को एक-दूसरे के

होना चाहिए। अपनी पूंजी को

में लेना चाहिए। यह दायरा प्रारम्भ में चाहे जितना छोटा क्यों न हो लेकिन जिस प्रकार एक स्थान पर एकत्र होने वाली शक्ति अपनी अभिव्यक्ति के लिए विस्तार चाहती है, उसी प्रकार यह दायरा भी धीरे-धीरे बढ़ता चला जाएगा।

लेकिन सर्वोपरि यथार्थ यह है कि मितव्ययिता और फिजूलखर्ची दोनों में संतुलन रखना चाहिए।

भोजन हमारे वीर्य एवं शारीरिक तथा मानसिक शक्ति का आधार होता है। खानपान में भी दूसरी चीजों की तरह एक मध्य मार्ग है। समृद्धि के आकांक्षी लोगों को उचित और पुष्टिकारक भोजन प्राप्त होना चाहिए परन्तु आवश्यकता से अधिक नहीं। वह व्यक्ति जो अपनी कंजूसी या तपस्या के कारण (ये दोनों ही रूप मितव्ययिता के गलत उदाहरण हैं) शरीर को भूखा रखता है अपनी मानसिक और शारीरिक शक्तियों को स्वयं क्षीण करता है और इस प्रकार सफलता प्राप्ति के लिए अपने को असमर्थ बनाता है। ऐसा व्यक्ति दुर्बल-मस्तिष्क होता है जिसका परिणाम निर्धनता के रूप में दृष्टिगोचर होता है।

पेटू आदमी भोजन के आधिक्य के कारण अपना विनाश करता है। उसका पशु के समान स्थूल शरीर अनेक प्रकार के विकारों से भरा होता है, रोग और दुराचार का केन्द्र होता है और उसका मस्तिष्क उत्तरोत्तर पाशविकतापूर्ण और भ्रान्त एवं अयोग्य होता जाता है। पेटू होना एक बहुत ही निम्न और पाशविकतापूर्ण दुर्गुण है, और मध्यम मार्ग ग्रहण करने वाले लोग पेटुओं से घृणा करते हैं।

जो लोग अपने खान-पान में मध्यम मार्ग अपनाते हैं, वही सर्वश्रेष्ठ कार्यकर्ता और नेता बनते हैं। उन्हें ही उचित शारीरिक और मानसिक क्षमता प्राप्त होती है। इस प्रकार मध्यम मार्ग ग्रहण करने से वे जीवन के संघर्ष में शक्ति और आनन्द के साथ सफल होते हैं।

वस्त्र हमारे शरीर को ढंकने और सुरक्षित रखने में सहायक होते हैं। बहुधा इस स्पष्ट उद्देश्य से सम्बन्ध न रखकर केवल प्रदर्शन मात्र के लिए वस्त्र धारण करते हैं। इस बात में भी उदासीनता और प्रदर्शन दोनों से बचना चाहिए क्योंकि प्रचलित रीति-रिवाज को

नज़र-अन्दाज़ नहीं किया जा सकता। स्वच्छता हमारे जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। अनुचित वेशभूषा और अलबड़ व्यक्तित्व वाले लोग भी सदैव असफल और एकाकी रहते हैं। किसी भी व्यक्ति की पोशाक जीवन में उसके पद के अनुकूल होनी चाहिए। वस्त्र भी अच्छी किस्म के होने चाहिए और मुनासिब तरीके से सिले होने चाहिए। पुराने वस्त्रों का जब तक कि वे जर्जर न हो जाएं, सभी प्रकार से उपभोग करना चाहिए। लेकिन उनके धारण करने का ढंग उचित और शोभनीय होना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति गरीब है, तो फटे हुए वस्त्र पहनने से भी उसकी प्रतिष्ठा नहीं घटती लेकिन ये वस्त्र स्वच्छ होने चाहिए और उसी प्रकार पहनने वाले का शरीर भी स्वच्छ और निर्मल होना चाहिए। लेकिन वस्त्रों का विलासिता पूर्ण प्रदर्शन एक दुर्गुण है और भले लोगों को चाहिए कि वे इससे बचने का भरसक प्रयत्न करें। मैं एक ऐसी महिला को जानता हूं जिसके पास चालीस पोशाकें थीं और ऐसे पुरुष को भी जानता हूं जिसके पास बीस घूमने की छड़ियां और हैट थे लगभग एक दर्जन बरसातियां थीं और एक दूसरे ऐसे आदमी को भी जानता हूं जिसके पास बीस तीस जोड़ी बूट थे। समृद्ध लोग—जो इस प्रकार विलासितापूर्ण उपादानों पर अपना धन बहाते हैं—वे वस्तुतः गरीबी को ही निमन्त्रण देते हैं, क्योंकि यह फ़िज़ूलख़र्ची है और फ़िज़ूलख़र्ची अभाव को न्योता देती है। इस प्रकार व्यर्थ नष्ट किया जाने वाला पैसा यदि विपत्तिग्रस्त लोगों को दे दिया जाए तो अधिक श्रेयस्कर हो।

वस्त्राभूषण तथा हीरे-जवाहरात को धारण करना हमारे ज्ञानहीन रिक्त मस्तिष्क का ही परिचायक है। शालीन और सभ्य लोग सर्वदा ही अपने पद और मर्यादा के अनुरूप वस्त्र धारण करते हैं और अपने अतिरिक्त धन को अपनी संस्कृति और सद्गुणों की अभिवृद्धि में व्यय करते हैं। शिक्षा और प्रगति के तत्त्व उनके लिए व्यय को पोशाक के प्रदर्शन करने की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं। इस प्रकार साहित्य कला और विज्ञान को प्रोत्साहन मिलता है। वास्तव में मस्तिष्क और आचरण का सौष्ठव प्राप्त करना ही श्रेयस्कर है। जिस मस्तिष्क में प्रतिभा और बुद्धिमत्ता है, वह शरीर

रहता है, शीघ्र ही बूढ़ा हो जाता है और किसी प्रकार की सफलता प्राप्त नहीं कर सकता। और जो व्यक्ति बुद्धिमत्तापूर्वक अपना समय खर्च करता है, उसे प्रतिष्ठा और ज्ञान की प्राप्ति होती है और समृद्धि उसके इशारे पर नाचती है। नष्ट किया हुआ धन पुनः प्राप्त हो सकता है, परन्तु नष्ट किया हुआ समय पुनः प्राप्त नहीं हो सकता।

एक पुरानी कहावत है कि 'समय ही धन है'। इस प्रकार समय ही स्वास्थ्य, शक्ति, कौशल, प्रतिभा और बुद्धिमत्ता है। समय को उचित श्रेणियों में विभाजित करना चाहिए। काम, विश्राम, भोजन और मनोरंजन उचित समय पर करना चाहिए। इन चीजों के लिए तैयारी करने में व्यर्थ समय नष्ट नहीं करना चाहिए। जो कुछ हमें करना है, यदि करने से पहले उचित समय उसपर विचार करने में लगाया जाएगा तो हमें कार्य में अधिक दक्षता और सफलता प्राप्त होगी। जो व्यक्ति उचित समय पर उठते हैं, वे अपनी योजनाओं पर सम्यक् विचार करते हैं और उचित अनुक्रम चिंतन और पूर्व-कल्पना के साथ अपने को इन योजनाओं की पूर्ति में संलग्न करते हैं। वे ही व्यक्ति अपेक्षाकृत अधिक कर्मकुशल और सफल सिद्ध होते हैं। वे व्यक्ति जो देर तक सोते हैं और उठने के तत्काल बाद कलेवा करने के लिए मेज पर पहुंच जाते हैं, कभी सफल नहीं हो सकते। इस प्रकार प्रातःकाल कलेवा करने से पूर्व एक घंटे का समय दिन भर के काम पर विचार करने में व्यय करके अपने श्रम को अधिक उपयोगी बना सकते हैं। ऐसा करने से हमारे मन को शांति मिलती है, मस्तिष्क खुलता है और अपनी शक्तियों को अधिक प्रभावकारी ढंग से प्रयोग करने का अवसर मिलता है। सबसे अधिक स्थायी सफलता वही होती है जोकि प्रातःकाल आठ बजने से पूर्व हमें प्राप्त हो जाती है। वे व्यक्ति जो प्रातःकाल ५ बजे उठते हैं, उस आदमी की अपेक्षा अपनी जीवन-यात्रा का बहुत अधिक सफर तय कर लेते हैं जो सोकर ही आठ बजे उठता है। शय्या के प्रति लिप्सा हमारे जीवन की दौड़ में बहुत बड़ी बाधा है। ऐसा व्यक्ति प्रतिदिन अपने प्रतिद्वन्द्वी को दो-तीन घंटे का लिया प्रदान करता है। वर्ष भर में इस प्रकार प्रतिदिन दो-तीन घंटे की पूंजी सफलता को पुष्ट और सुनिश्चित बनाती है।

कल्पना कीजिए कि ऐसे दो विरोधी व्यक्तियों की सफलता में तीस वर्ष के बाद कितना बड़ा अन्तर हो जाएगा। देर से सोकर उठने वाले लोग हमेशा हड़बड़ाहट करते हुए उठते हैं और लोग समय की क्षति पूर्ति करने के लिए सब काम जल्दबाजी में करते हैं जबकि जल्दबाजी से सभी कामों में असफलता प्राप्त होती है। प्रातःकाल जल्दी उठने वाले लोग अपने समय को मितव्ययिता से खर्च करते हैं। उन्हें जल्द बाजी करने की जरूरत नहीं पड़ती। वे समय से पूर्व ही अपने कार्यों को पूरा कर लेते हैं। ऐसे ही व्यक्ति अपने काम को शांति और सुरुचि के साथ सम्पन्न कर सकते हैं और दिन के अन्त में ऐसे ही व्यक्ति अपने मन में सन्तोष का अनुभव कर सकते हैं और कौशल तथा सफलतापूर्वक किए हुए काम के परिमाण में भी वृद्धि कर सकते हैं।

समय में मितव्ययिता लाने के लिए हमें अपने जीवन में से बहुत-सी चीजें निकालनी होती हैं। ऐसे व्यसन जिनके हम अभ्यस्त हो जाते हैं और बार-बार उनमें लिप्त होना चाहते हैं उनका बलिदान करके हमें अपने जीवन के मुख्य उद्देश्य के प्रति जागरूक रहना होता है। जीवन को अनावश्यक तत्त्वों से ध्यानपूर्वक निकाल देना सफलता की सिद्धि में एक महत्त्वपूर्ण कारण सिद्ध होता है। सभी महान व्यक्ति इस काम में कुशल होते हैं। वस्तुतः समय की मितव्ययिता ही उनकी महत्ता का आधार बनती है। मितव्ययिता का यही तत्त्व हमारे मन हमारे कर्म और हमारे भाषण में से अतिरिक्त चीजों को निकालने में सहायक होता है। मूढ़ और असफल लोग सर्वत्र लापरवाही के साथ उद्देश्यहीन चर्चा में अपने को फंसाते रहते हैं और जो कोई भी वस्तु अच्छी या बुरी उनके रास्ते में आती है उसे मन में रख लेते हैं। एक सच्चे मितव्ययी व्यक्ति का मस्तिष्क एक ऐसा यंत्र होता है जो निरर्थक वस्तुओं को निकालकर फेंकता जाता है और केवल उन्हीं वस्तुओं को ग्रहण करता है जो जीवन-व्यापार में उपयोगी सिद्ध होती हैं। भाषण में वह केवल चुने हुए शब्दों का प्रयोग करता है और इस तरह अपनी शक्ति को व्यर्थ नष्ट होने नहीं देता।

नियत समय पर शय्या ग्रहण करने और नियत समय पर शय्या त्याग करने का नियम हमारे जीवन के प्रत्येक क्षण को उद्देश्यपूर्ण

विचारों और प्रभावकारी कार्यों से सम्पन्न करता है। संयम ही सच्ची मितव्ययिता है।

शक्ति का मितव्यय हम अपने में अच्छी आदतें डालकर ही कर सकते हैं। सभी प्रकार के दुर्व्यसन हमारी शक्ति के भयंकर विनाश का कारण बनते हैं। बुरी आदतों का शिकार होने से हमारी शक्ति का विचारहीनतापूर्ण अपव्यय होता है। यदि हम इस शक्ति को सुरक्षित रखें और उचित दिशा में उसका प्रयोग करें तो हम बड़ी से बड़ी सफलताओं के स्वामी बन सकते हैं। यदि हम उपर्युक्त ... बीजों का विचारपूर्वक अभ्यास कर लें तो हमें अपनी शक्तियों को सुरक्षित रखने में सहायता मिलेगी। व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह इससे भी एक कदम आगे बढ़कर अपनी शक्ति का सतर्कतापूर्वक स्वामी बन जाए और किसी भी प्रकार के दुर्व्यसन में अपने को लिप्त न होने दे। क्योंकि शारीरिक दुर्व्यसनों में लिप्त रहना ही केवलमात्र बुराई नहीं है, हमें समस्त मानसिक दुर्व्यसनों अर्थात् जल्दबाजी चिन्ता अहिष्णुता निराशा क्रोध शक और ईर्ष्या करने से भी अपने को बचाना है। ये दुर्गुण हमारे मस्तिष्क को विशृंखल कर देते हैं मानसिक दुर्गुणों के यही वे रूप हैं जिनसे चरित्रवान व्यक्ति को सावधानी से बचना चाहिए और उनपर विजय प्राप्त करनी चाहिए। बदमिजाजी के बार-बार पड़ने वाले दौरों के कारण हमारी शक्ति का कितना ह्रास होता है यदि इस शक्ति को नियमित और सुविचारित रूप से व्यय किया जाए तो इससे मन को शक्ति प्राप्त होती है, चरित्र प्रभावकारी बनता है और अनेक सफलताएं प्राप्त करने की क्षमता प्राप्त होती है। क्रोधी मनुष्य एक ऐसा शक्तिशाली मनुष्य होता है जो अपनी मानसिक शक्ति के दुरुपयोग से अपने को दुर्बल बना लेता है। अपनी शक्ति की अभिव्यक्ति में आत्मसंयम से काम लेना चाहिए। जीवन के किसी भी विभाग में जाइए, क्रोधी व्यक्ति के मुकाबले शांत आदमी सदैव ही अधिक श्रेष्ठ और आकर्षक सिद्ध होता है। लोगों के मन में उसके प्रति प्रतिष्ठा का भाव जगता है। बुरी आदतों और अधार्मिक अभिरुचियों का संचय करने में अपनी शक्ति का अपव्यय किसी प्रकार भी साधु नहीं। क्योंकि प्रत्येक हानिकारक दुर्व्यसन

हमारे जीवन-संघर्ष में बाधा बनता है और हमें विपत्ति तथा दुर्बलता का शिकार बनाता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है मितव्ययिता का उद्देश्य केवल पैसे बचाना ही नहीं है बल्कि इससे भी अधिक गम्भीर और दूरगामी है। यह हमारी प्रगति के प्रत्येक पक्ष और जीवन के प्रत्येक विभाग को स्पर्श करता है। एक पुरानी कहावत है 'टेक केयर ऑफ़ योर पेंस, एण्ड द पाउण्ड्स विल टेक केयर ऑफ़ देमसेल्व्स'। जिसका अर्थ है—अपने पैसे की रक्षा कीजिए, रुपया अपनी रक्षा स्वयं कर लेगा। यह एक ऐसी कहावत है, जिसपर व्यसनों में फंसे हुए लोगों को ध्यानपूर्वक मनन करना चाहिए। ऐसे व्यक्ति अपनी मूल शक्ति में परिवर्तन नहीं होते वरन् वे अपनी शक्ति के दुरुपयोग से अपने को हीन बना लेते हैं। इन्हीं वासनाओं में फिजूलखर्च होने वाली शक्ति को यदि यत्नपूर्वक संगृहीत किया जाए तो चरित्र के प्रभावकारी रूप में उसका आविष्कार हो सकता है। इस प्रकार अपनी अमूल्य शक्ति का दुर्गुणों में व्यय करना पैसे को व्यय करने के समान है जिसके परिणामस्वरूप रुपया स्वयं नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार हम भावनाओं के पैसों का संग्रह करके सद्गुणों की स्वर्णमुद्राओं का संचय करते हैं। अपनी निम्न भावनाओं पर अधिकार किया जाए तो बड़ी-बड़ी सफलताएं स्वयमेव सिद्धि के रूप में प्राप्त होती हैं।

मितव्ययिता के स्तम्भ का मजबूती के साथ निर्माण करने के लिए निम्नलिखित वस्तुओं की आवश्यकता होती है

१ समभाव ३ साधनसम्पन्नता
२ कार्यदक्षता ४ मौलिकता

समभाव प्रत्येक वस्तु में मितव्ययिता के सिद्धान्त का महत्वपूर्ण अंग है। यह समभाव हम विरोधी अतिशयता से बचाता है, और मध्यम मार्ग ग्रहण करने में सहायक होता है। जो अनावश्यक और हानिकारक है उनसे भी हमें बचाता है। बुराई में लिप्त होना किसी प्रकार भी चमत्कार का द्योतक नहीं क्योंकि उसमें अतिशयता का भाव सन्निहित है। एक सच्चा समभाव ग्रहण करने वाला व्यक्ति से परहेज करता है। अग्नि का उचित प्रयोग यह नहीं है

अपने हाथ रखकर उन्हें जला लें वरन् उसका उचित प्रयोग यह है कि सुरक्षित दूरी पर रखकर हम अपने हाथों को गर्म कर लें। बुराई एक ऐसी अग्नि है, जो केवल स्पर्श-मात्र से जला डालती है। हानिकारक विलासिता को स्पर्श न करने में ही बुद्धिमत्ता है। धूम्रपान नसवार सेवन मदिरापान और जुआ खेलना ऐसी साधारण बुराइयां हैं जिन्होंने सहस्रों लोगों को विफलता रोग और विपत्ति से आक्रांत किया है और सम्भवतः एक भी व्यक्ति को स्वास्थ्य सुख और सफलता प्रदान नहीं की। वह व्यक्ति जो इन दुर्व्यसनों पर विजय प्राप्त करता है समय प्रतिभा और साधनों में सम्पन्न होता है और उस व्यक्ति की अपेक्षा अधिक आगे बढ़ जाता है जो अपने को इन व्यसनों का शिकार बनाता है। दुनिया में सबसे अधिक स्वस्थ सुखी दीर्घ आयु के लोग वही होते हैं जो मध्य मार्ग ग्रहण करते हैं और अपनी आदतों पर अधिकार रखते हैं। समभाव रखने से हमारे जीवन तत्त्व सुरक्षित रहते हैं। अतिसयता करने से उनका विनाश होता है। वह व्यक्ति जो अपनी वासनाओं पर विजय प्राप्त करता हुआ समभाव ग्रहण करता है, ज्ञान और बुद्धिमत्ता के साथ-साथ सुख और स्वास्थ्य भी प्राप्त करता है और इस प्रकार योग्यता और प्रभाव के सर्वोच्च शिखर को प्राप्त करता है। जीवन में असमभाव रखकर चलने वाले लोग अपनी ही मूर्खता से अपना विनाश करते हैं और अपनी क्षमताओं को अक्षम बनाते हैं, और इस प्रकार स्थायी सफलता प्राप्त करने के स्थान पर वे एक अस्थायी और अस्थिर समृद्धि ही प्राप्त करते हैं।

कार्यक्षमता का गुण हमें अपने प्रभाव और समृद्धि के उचित संरक्षण से ही प्राप्त होता है। शक्ति के एकाग्र उपयोग से ही कार्यदक्षता प्राप्त होती है। ऊंचे स्तर की दक्षता जिसे हम चातुर्य और प्रतिभा की संज्ञा देते हैं, सामर्थ्य के उच्चतर परिणाम में एकाग्रीकरण से ही प्राप्त होती है। बहुधा जिस कार्य से लोगों को प्रेम होता है, उसीमें उन्हें निपुणता प्राप्त होती है, क्योंकि उनका मस्तिष्क निरन्तर उसी वस्तु पर केन्द्रित होता है। दक्षता मानसिक मितव्ययिता का ही परिणाम है जो विचार को आविष्कार और क्रियाशीलता में परिवर्तित करता है। बिना दक्षता के समृद्धि प्राप्त नहीं हो सकती

और जितनी दक्षता हमें प्राप्त होगी उसीके अनुपात से समृद्धि भी हमें प्राप्त होगी। प्राकृतिक विकास प्रक्रिया के अनुसार दक्षताहीन लोग अपने उचित स्थान पर पहुंच जाते हैं। उन्हें अपेक्षाकृत कम पारिश्रमिक मिलता है और वे बहुधा बेकार रहते हैं। ऐसे आदमियों को कौन अपने यहां काम देगा जो मुनासिब तौर पर अपना काम नहीं करते। उदारतापूर्वक कोई मालिक कभी-कभी दया करके भले ही ऐसे व्यक्ति को अपने यहां स्थान दे दे। व्यापार कार्यालय या घर का कामकाज समन्वित क्रियाशीलता के केन्द्र होते हैं। वे दान पर चलने वाली संस्थाएं नहीं होतीं और यही कारण है कि औद्योगिक संस्थाएं उसी परिमाण में सफल अथवा असफल होती हैं जिस परिमाण में उनका व्यक्तिगत कार्यकर्ता योग्य अथवा अयोग्य होता है।

विचार और ध्यान के एकाग्र करने से ही कार्यदक्षता का गुण प्राप्त होता है। निरुद्देश्य और विचारहीन लोग अक्सर बेकार रहते हैं। वे चौराहों पर ही डोलते देखे जाते हैं। वे सरल से काम को भी उचित रीति से सम्पन्न नहीं करते क्योंकि वे अपने विचार और ध्यान को एक बिन्दु पर केन्द्रित नहीं कर सकते। मेरे एक परिचित सज्जन ने एक व्यक्ति को खिड़कियां साफ करने पर लगाया। परन्तु वह व्यक्ति इतने दिनों निष्क्रिय रह चुका था और चक्षतिपूर्ण विचार कर सकने में इतना अक्षम हो चुका था कि वह खिड़कियां साफ भी नहीं कर सका। जब उसे खिड़कियां साफ करने का उचित तरीका बताया गया तब भी वह निर्देश-पालन नहीं कर सका। इस उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि मामूली से मामूली काम में भी कार्यदक्षता की आवश्यकता होती है। कार्यदक्षता द्वारा ही व्यक्ति का स्थान समाज में निश्चित होता है और सीढ़ी दर सीढ़ी जैसे-जैसे उसकी कार्यक्षमता बढ़ती है वह उत्तरोत्तर बड़ी से बड़ी क्षमताओं का अपने अन्दर में विकास करता जाता है। एक छोटा कारीगर अपने औजारों के प्रयोग करने में निपुण होता है। इसी प्रकार एक छोटे आदमी को भी अपने विचारों के नियोजन में दक्ष होना चाहिए। दक्षता का सर्वोत्तम रूप ही बुद्धिमत्ता है। प्रत्येक कार्य को करने का एक ही उचित तरीका होता है लेकिन उसको गलत करने के सैकड़ों

होते हैं और नये विचारों के लोग ही उन्नति करते हैं। दूसरे लोग पतन के गर्त में गिर जाते हैं।

मौलिकता हमें तभी प्राप्त होती है, जिस समय हमारे साधन—सम्पन्नता परिपक्वता और पूर्णता को प्राप्त कर लेते हैं। जहां मौलिकता है वहीं प्रतिभा है। प्रतिभासम्पन्न लोग दुनिया के प्रकाश-स्तम्भ होते हैं। मनुष्य जिस किसी काम को हाथ में उठाता है, उसे सम्पन्न करने में उसके समान ही उसका एकमात्र अवलम्ब बनते हैं। दूसरों से सीखते हुए भी हमें उनका अनुकरण नहीं करना चाहिए, वरन् अपने कार्य में अध्यवसाय के द्वारा एक नवीनता और मौलिकता उत्पन्न करनी चाहिए। मौलिक व्यक्ति ही दुनिया में अपना सिर ऊंचा कर सकता है। आरम्भ में ऐसे व्यक्तियों के प्रति उपेक्षा की जा सकती है, परन्तु अन्ततोगत्वा उन्हें स्वीकार किया जाता है और वे मान्यता के लिए आदर्श बनते हैं। मौलिकता उत्पन्न करने की भावना पर अधिकार कर लेने के उपरान्त व्यक्ति लोकनायक के रूप में प्रतिष्ठित होता है और ज्ञान और दक्षता के किसी भी विभाग में उसे नेता के रूप में स्वीकार किया जाता है। परन्तु मौलिकता किसीपर थोपी नहीं जा सकती वह स्वयं विकसित होती है। एक के बाद दूसरी कार्यदक्षता और नैपुण्य की प्रक्रिया से होती हुई और मानसिक शक्तियों के उचित और पूर्ण उपयोग द्वारा प्राप्त निपुणता के परिमाण के अनुपात से वह उच्च से उच्चतर स्तर को प्राप्त होती है। वह व्यक्ति जो किसी काम के प्रति पश्चाताप से अपने आप को अर्पित करता है और अपनी समस्त शक्तियों को उसमें केन्द्रित करता है, एक न एक दिन ऐसा अवश्य आता है कि दुनिया एक सामर्थ्यवान व्यक्ति के रूप में उसका स्वागत करती है। और फ्रांसीसी लेखक बालजक ने वर्षों को श्रम-साधना के उपरान्त एक बार यह घोषित किया था "मैं अब एक मेधावी व्यक्ति बनने जाता हूं।" इसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रतिभा की खोज करता हुआ मौलिक प्रतिभाओं के मध्य स्थान ग्रहण करता है—उन देवस्य व्यक्तियों के मध्य जो कि मानवता के लिए नवीनतर, उच्चतर और अधिक उपयोगी दिशाओं का उन्मेष करते हैं।

३ | सत्यनिष्ठा

समृद्धि कोई सस्ता सौदा नहीं। समृद्धि को प्राप्त करने के लिए मूल्य के रूप में दो चीज़ों की आवश्यकता पड़ती है—ईमानदारी के साथ किया हुआ श्रम और नैतिक सामर्थ्य। जिस प्रकार एक बुलबुला अधिक समय तक नहीं ठहर सकता उसी प्रकार धोखाधड़ी भी अधिक समय तक सफल सिद्ध नहीं हो सकती। धोखाधड़ी से थोड़े समय के लिए ढेरों के धन-दौलत भले ही इकट्ठी की जा सके परन्तु अन्ततोगत्वा उसका विनाश अवश्यम्भावी है। धोखाधड़ी से कभी कुछ प्राप्त नहीं हुआ और कभी हो भी नहीं सकता। क्षणिक लाभ उससे भले ही हो जाए लेकिन उससे होने वाली हानि अपने साथ बहुत कुछ ले जाती है। परन्तु धोखाधड़ी करना केवल बेईमानीपूर्वक धन कमाने तक ही सीमित नहीं है। वे सभी लोग जो किसी वस्तु का पूरा मूल्य चुकाए बिना उसे प्राप्त करने की कोशिश करते हैं धोखाधड़ी करते हैं चाहे वे इस सत्य से अवगत हों या न हों। जो व्यक्ति जान-बूझकर बगैर श्रम किए धन लाभ करने का प्रयत्न करता है मानसिक रूप से वह चोर और तस्कर की कोटि में आ जाता है, और देर-सबेर ऐसे लोगों के प्रभाव में भी आ जाता है जो स्वयं उसकी पूंजी को हड़प कर लेते हैं। चोर कौन होता है?—वह व्यक्ति जो गैरकानूनी तौर पर वस्तुओं का पूरा मूल्य चुकाए बिना उनपर अधिकार करने की इच्छा से अभिप्रेत होता है। जो व्यक्ति समृद्धिशाली होना चाहता है, उसका यह कर्तव्य हो जाता है कि शारीरिक अथवा मानसिक रूप में अपनी इच्छित

होते हैं और नये विचारों के लोग ही उन्नति करते हैं। दूसरे लोग पतन के गर्त में गिर जाते हैं।

मौलिकता हमें तभी प्राप्त होती है जिस समय हमारे साधन—सम्पन्नता परिपक्वता और पूर्णता को प्राप्त कर लेते हैं। यही मौलिकता है यही प्रतिभा है। प्रतिभासम्पन्न लोग दुनिया के प्रकाश-स्तम्भ होते हैं। मनुष्य जिस किसी काम को हाथ में उठाता है, उसे सम्पन्न करने में उसके समान ही उसका एकमात्र अवलम्ब रहते हैं। दूसरों से सीखते हुए भी हमें उनका अनुकरण नहीं करना चाहिए, वरन् अपने कार्य के अध्यवसाय के द्वारा एक नवीनता और मौलिकता उत्पन्न करनी चाहिए। मौलिक व्यक्ति ही दुनिया में अपना सिर ऊंचा कर सकता है। प्रारम्भ में ऐसे व्यक्तियों के प्रति उपेक्षा दिखाई जा सकती है, परन्तु अन्ततोगत्वा उन्हें स्वीकार किया जाता है और वे मानवता के लिए आदर्श बनते हैं। मौलिकता उत्पन्न करने की भावना पर अधिकार कर लेने के उपरान्त व्यक्ति लोकनायक के रूप में प्रतिष्ठित होता है और ज्ञान और दक्षता के किसी भी विषय में उसे नेता के रूप में स्वीकार किया जाता है। परन्तु मौलिकता किसी पर थोपी नहीं जा सकती वह स्वयं विकसित होती है। एक के बाद दूसरी कार्यदक्षता और नैपुण्य की प्रक्रिया से होती हुई और मानसिक शक्तियों के उचित और पूर्ण उपयोग द्वारा प्राप्त निपुणता के परिमाण के अनुपात से वह उच्च से उच्चतर स्तर को प्राप्त होती है। वह व्यक्ति जो किसी काम के प्रति अध्यवसाय से अपने-आप को अर्पित करता है और अपनी समस्त शक्तियों को उसमें केन्द्रित करता है, एक न एक दिन ऐसा अवश्य आता है कि दुनिया एक सामर्थ्यवान व्यक्ति के रूप में उसका स्वागत करती है। और फ्रांसीसी लेखक बालज़ाक ने वर्षों की श्रम-साधना के उपरान्त एक बार यह घोषित किया था—मैं अब एक मेधावी व्यक्ति बनने वाला हूं। इसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रतिभा की खोज करता हुआ मौलिक प्रतिभाओं के मध्य स्थान ग्रहण करता है—उन देवतुल्य व्यक्तियों के मध्य जो कि मानवता के लिए नवीनतर, उच्चतर और अधिक उपयोगी दिशाओं का उन्मेष करते हैं।

३ | सत्यनिष्ठा

समृद्धि कोई सस्ता सौदा नहीं। समृद्धि को प्राप्त करने के लिए मूल्य के रूप में दो चीज़ों की आवश्यकता पड़ती है—परिश्रम के साथ किया हुआ श्रम और नैतिक सामर्थ्य। जिस प्रकार एक बुलबुला अधिक समय तक नहीं ठहर सकता उसीप्रकार धोखाधड़ी भी अधिक समय तक सफल सिद्ध नहीं हो सकती। धोखाधड़ी से थोड़े समय के लिए ठगी के साथ धन-दौलत भले ही इकट्ठी की जा सके परन्तु अन्ततो-गत्वा उसका विनाश अवश्यम्भावी है। धोखाधड़ी से कभी कुछ प्राप्त नहीं हुआ और कभी हो भी नहीं सकता। क्षणिक लाभ उससे भले ही हो जाए लेकिन उससे होने वाली हानि अपने साथ बहुत कुछ ले जाती है। परन्तु धोखाधड़ी करना केवल बेईमानीपूर्वक धन कमाने तक ही सीमित नहीं है। वे सभी लोग जो किसी वस्तु का पूरा मूल्य चुकाए बिना उसे प्राप्त करने की कोशिश करते हैं धोखाधड़ी करते हैं चाहे वे इस सत्य से अवगत हों या न हों। जो व्यक्ति जान-बूझकर बगैर श्रम किए धन-लाभ करने का प्रयत्न करता है, मानसिक रूप से वह चोर और तस्कर की कोटि में आ जाता है और देर-सबेर ऐसे लोगों के प्रभाव में भी आ जाता है जो स्वयं उसकी पूंजी को हड़प कर बैठते हैं। चोर कौन होता है?—वह व्यक्ति जो गैरकानूनी तौर पर वस्तुओं का पूरा मूल्य चुकाए बिना उनपर अधिकार करने की इच्छा व अभि भ्रष्ट होता है। जो व्यक्ति समृद्धिशाली होना चाहता है, उसका यह कर्तव्य हो जाता है कि आर्थिक अथवा मानसिक रूप में उसकी इच्छित

चारी भी सम्मिलित है, परन्तु इससे भी कुछ अधिक इसका अर्थ होता है। सत्यनिष्ठा मानव समाज की रीढ़ की हड्डी है। समस्त मानवीय समाज इसीके सहारे खड़ा होता है। बिना सत्यनिष्ठा के एक व्यक्ति को दूसरे पर न भरोसा हो सकता है और न विश्वास और इस प्रकार सभी कामों में व्यापार की जड़ें हिल जाती हैं।

जिस प्रकार झूठे आदमी यह समझते हैं कि दुनिया के सभी लोग झूठे हैं उसी प्रकार सत्यनिष्ठ लोग भी यही समझते हैं कि दुनिया के सभी लोग सत्यनिष्ठ हैं। वे दूसरों पर भरोसा करते हैं और दूसरे उनपर भरोसा करते हैं। अपने उदार मन और निर्भीक दृष्टि से वे अपने साथ धोखा करने वालों को लज्जित कर देते हैं। कोई भी उन्हें ठगने में असफल होता है। इमर्सन ने इसी बात को बहुत अच्छी तरह कहा है, "दूसरे लोगों पर भरोसा करो और वे आपके प्रति सच्चे रहेंगे ही, भले ही वे व्यापार के नियमों का अपवाद करते हुए आपके प्रति दुर्व्यवहार ही क्यों न करते हों।"

सत्यनिष्ठ व्यक्ति अपनी उपस्थिति से ही अपने चारों तरफ के लोगों में नैतिकता का वातावरण तैयार करता है और अपने प्रभाव से उन्हें श्रेष्ठतर बनाता है। लोगों का एक-दूसरे पर जबर्दस्त प्रभाव पड़ता है और क्योंकि अच्छाई बुराई से हमेशा ही बलवती होती है इसलिए अच्छा आदमी अपने संपर्क से दुर्बल और बुरे आदमियों को लज्जित करता है और साथ ही उनको ऊंचा उठाने में सहायक होता है।

सत्यनिष्ठ व्यक्ति के चारों तरफ एक गरिमा होती है जो दूसरे लोगों में भय का संचार करती है और साथ ही उन्हें अच्छाई की ओर प्रेरित भी करती है। ऊंचे से ऊंचा बौद्धिक गुण भी नैतिक गरिमा की तुलना में नहीं रखा जा सकता। बड़े से बड़े प्रतिष्ठा सम्पन्न व्यक्ति की अपेक्षा भी सत्यनिष्ठ व्यक्ति को दुनिया में अधिक ऊंचा पद दिया जाता है। बकमिन्स्टर का कहना है, "स्वतन्त्र सत्यनिष्ठा की नैतिक गरिमा प्रकृति की सर्वोपरि उदात्त वस्तु है।" इसी गुण से चरित्रवानों का निर्माण होता है। प्रतिफलित सत्यनिष्ठा वाले लोग ही नायकत्व को प्राप्त करते हैं। इस नायकत्व की अभिव्यक्ति

के लिए केवल अवसर की देर होती है। ऐसे व्यक्ति स्थायी आनन्द प्राप्ति के सम्बन्ध से अनुप्रेरित होते हैं। एक प्रतिष्ठासम्पन्न व्यक्ति भले ही जीवन का वास्तविक सुख प्राप्त न कर सके लेकिन सत्य निष्ठ व्यक्ति के बारे में ऐसा नहीं होता। दुनिया की कोई भी वस्तु न बीमारी न बेकारी और न ही मृत्यु उसे अपने स्थायी सन्तोष से वंचित कर सकती है।

सत्यनिष्ठा हमें सीधा समृद्धि की ओर अग्रसर करती है। चार सीढ़ियां हैं जिनपर चढ़कर हम समृद्धि की ओर बढ़ते हैं। प्रथम सीढ़ी यह है कि सत्यनिष्ठ व्यक्ति हमेशा ही दूसरों का विश्वासपात्र बनता है। द्वितीय यह कि दूसरों का विश्वासपात्र होने से लोग उसपर भरोसा करना शुरू कर देते हैं। तृतीय यह कि इस विश्वास की प्राप्ति होने पर उसे अच्छी ख्याति प्राप्त होती है। चतुर्थ यह कि यह ख्याति उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है और उसके लिए सफलता का साधन बनती है।

बेईमानी का परिणाम इसके विपरीत होता है। दूसरों के साथ विश्वासघात करके हम दूसरों में अपने प्रति सन्देह और अविश्वास पैदा करते हैं जिसके कारण हम बदनाम होते हैं और परिणाम के रूप में असफलता ही हाथ लगती है।

सत्यनिष्ठा के स्तम्भ को निम्नलिखित चार शक्तिशाली तत्वों से सम्पुष्ट किया जा सकता है

१ ईमानदारी ३ सौहृदयता
२ निर्भीकता ४ अजेयता

ईमानदारी सफलता का सबसे अधिक विश्वसनीय तत्व है। एक दिन ऐसा जरूर आता है जब बेईमान आदमी दुःख और विपत्ति में फंसकर अपनी बेईमानी पर पश्चाताप करने लगता है। लेकिन ऐसा कोई भी आदमी नहीं जिसे अपनी ईमानदारी पर पश्चाताप करना पड़ा हो। हालांकि कभी-कभी ईमानदार आदमी भी असफल हो जाते हैं क्योंकि वे मितव्ययिता योजना तथा व्यवस्था जैसे दूसरे स्तम्भों का निर्माण करने में असमर्थ रहते हैं। परन्तु उनकी असफलता इतनी अधिक दुःखदायी नहीं होती जितनी कि बेईमान व्यक्ति

भी होती है। कम से कम उन्हें इतना सन्तोष तो होता है कि उन्होंने कभी किसी व्यक्ति को धोखा नहीं दिया। अपने जीवन के अंधकार युक्त क्षणों में भी वे अपनी आन्तरिक पवित्रता पर सन्तोष अनुभव कर सकते हैं।

अज्ञानी लोग यह सोचते हैं कि समृद्धि प्राप्त करने के लिए बेईमानी ही सबसे सीधा मार्ग है। ऐसा इसलिए है कि वे बेईमानी पर आचरण करते हैं। बेईमान आदमी नैतिकता की दृष्टि से अदूरदर्शी होता है। जिस प्रकार एक शराबी केवल तात्कालिक आनन्द को ही देखता है, उसके अंतिम पतनशील परिणाम को नहीं देखता उसी प्रकार एक बेईमान आदमी उसके तात्कालिक लाभ को ही देखता है, उसके अन्तिम परिणाम को नहीं देखता। वह नहीं समझ पाता कि इस प्रकार के आचरण से उसका चरित्र नष्ट होता है और वह अपने व्यापार का विध्वंस कर लेता है। इसी प्रकार दूसरों के दाम को अपनी जेब में रखकर भले ही हम यह सोच लें कि कितनी ही चालाकी और सफलता के साथ हमने दूसरों को ठग लिया है, लेकिन हम इस भावना से अवगत नहीं होते कि ऐसा करके हमने स्वयं अपने को ही ठगा है। बेईमानी से प्राप्त हुए पैसे को मय सूद के वापस आना है और इस न्याय से बचने का कोई भी मार्ग नहीं है। जिस प्रकार आकाश में फेंका हुआ पत्थर गुरुत्वाकर्षण-सिद्धान्त के द्वारा पृथ्वी पर ही लौटकर आता है, उसी प्रकार नैतिक पुरस्कार अर्जन भी अवश्यम्भावी होता है।

जो व्यापारी हमेशा अपने सहायकों से झूठ बोलने की अपेक्षा करता है वह अपने चारों तरफ सन्देह, अविश्वास और घृणा ही एकत्र करता है। नैतिक रूप से दुर्बल लोग ही उनके आदेशों का पालन करते हैं, भले ही वे इस अशुभ कार्य से अपनी अन्तरात्मा को अपवित्र करने में बाधित होते हों परन्तु मन में उनके प्रति घृणा अवश्य रखते हैं। ऐसे विषाक्त वातावरण में सफलता किस प्रकार प्राप्त हो सकती है! इस प्रकार के व्यापार में विध्वंस तत्त्व आ जाते हैं और एक न एक दिन अपरिहार्य रूप से उसका पतन होता है।

ईमानदार व्यक्ति असफल हो सकता है लेकिन अपनी ईमान

दारी के कारण नहीं। उसकी असफलता भी प्रतिष्ठित होती है और उससे उसके चरित्र और ख्याति की हानि नहीं होती। निस्सन्देह किसी दिशा में सफलता प्राप्त करने की अक्षमता उसे अपनी हीन तायों के कारण ही होती है। परन्तु इस असफलता से शिक्षा लेकर वह ऐसे कार्य में अपने को लगाता है जो उसकी क्षमताओं के अनुरूप होता है और अन्ततोगत्वा वह सफलता प्राप्त करता है।

कारोबार में ईमानदारी बरतने की सराहना वे लोग भी करते हैं जो बेईमान होते हैं। वे व्यक्ति जो अपने व्यापारिक आदान-प्रदान में सचाई रखते हैं सच बोलते हैं और अपने वचन को पूरा करते हैं, उन्हें किसी अनिष्ट का भय नहीं हो सकता।

निर्भीकता व्यक्ति में ईमानदारी के साथ ही उत्पन्न होती है। ईमानदार व्यक्ति की नजर साफ पैनी होती है। वह अपने साथियों की नजर से नजर मिला सकता है। उसके भाषण में स्पष्टता और विश्वसनीयता होती है। झूठा आदमी हमेशा नजर चुराकर बातें करता है। उसकी आँखें धुंधली और तिरछी होती हैं। वह दूसरों की आँखों से आँखें नहीं मिला सकता। उसके भाषण को सुनकर सन्देह होता है क्योंकि वह उलझा हुआ अविश्वसनीय होता है।

आदमी अपने दायित्वों को पूरा कर लेता है तो उसे फिर किसी चीज का भय नहीं रहता। उसके सभी व्यापारिक सम्बन्ध सुरक्षित रहते हैं। उसकी मैत्री और कार्य समय की प्रखरता को सहन कर सकते हैं। यदि ऐसा व्यक्ति विपत्तियों में फंसकर ऋणग्रस्त हो भी जाए तो भी सब लोग उनपर भरोसा करते हैं और धैर्य के साथ अपना ऋण अदा होने की प्रतीक्षा करते हैं। बेईमान लोग अपना ऋण चुकाने से बचना चाहते हैं और सतत भय की भावना से पीड़ित रहते हैं। लेकिन ईमानदार लोग ऋणग्रस्त होना नहीं चाहते। परन्तु परिस्थितिवश ऐसा हो जाने पर भी वे भयभीत नहीं होते वरन् अपने प्रयत्नों को द्विगुणित करते हुए अपने ऋण की अदायगी करते हैं।

बेईमान लोग हमेशा ही भयभीत रहते हैं। उन्हें ऋण का भय नहीं होता उन्हें भय यह होता है कि उन्हें अपने ऋण की अदायगी—

की होती है। कम से कम उन्हें इतना सन्तोष तो होता है कि उन्होंने कभी किसी व्यक्ति को धोखा नहीं दिया। अपने जीवन के अंधकार पूर्ण क्षणों में भी वे अपनी आन्तरिक पवित्रता पर सन्तोष अनुभव कर सकते हैं।

अज्ञानी लोग यह सोचते हैं कि समृद्धि प्राप्त करने के लिए बेईमानी ही सबसे सीधा मार्ग है। ऐसा इसलिए है कि वे बेईमानी पर आचरण करते हैं। बेईमान आदमी नैतिकता की दृष्टि से अदूरदर्शी होता है। जिस प्रकार एक शराबी केवल तात्कालिक आनन्द को ही देखता है, उसके अंतिम पतनशील परिणाम को नहीं देखता उसी प्रकार एक बेईमान आदमी उसके तात्कालिक लाभ को ही देखता है, उसके अन्तिम परिणाम को नहीं देखता। वह नहीं समझ पाता कि इस प्रकार के आचरण से उसका चरित्र नष्ट होता है और वह अपने व्यापार का विध्वंस कर लेता है। इसी प्रकार दूसरों के लाभ को अपनी जेब में रखकर भले ही हम यह सोच लें कि कितनी ही चालाकी और सफलता के साथ हमने दूसरों को ठग लिया है, लेकिन हम इस यथार्थता से अवगत नहीं होते कि ऐसा करके हमने स्वयं अपने को ही छला है। बेईमानी से प्राप्त हुए पैसे को हम सूद के वापस आता है और इस ब्याज से बचने का कोई भी मार्ग नहीं है। जिस प्रकार आकाश में फेंका हुआ पत्थर गुरुत्वाकर्षण-सिद्धान्त के द्वारा पृथ्वी पर ही लौटकर आता है, उसी प्रकार नैतिक गुरुत्वाकर्षण भी अस्तित्ववान होता है।

जो व्यापारी हमेशा अपने सहायकों से झूठ बोलने की अपेक्षा करता है वह अपने चारों तरफ सन्देह अविश्वास और घृणा ही एकत्र करता है। नैतिक रूप से दुर्बल लोग ही उसके आदेशों का पालन करते हैं, भले ही वे इस अशुभ कार्य से अपनी अन्तरात्मा को अपवित्र करने में बाधित होते हों परन्तु मन में उसके प्रति घृणा अवश्य रखते हैं। ऐसे विषाक्त वातावरण में सफलता किस प्रकार प्राप्त हो सकती है! इस प्रकार के व्यापार में विध्वंस तत्व आ जाते हैं और अन्त में एक दिन अपरिहार्य रूप से उसका पतन होता है।

ईमानदार व्यक्ति असफल हो सकता है, लेकिन अपनी ईमान

दारी के कारण नहीं। उसकी असफलता भी प्रतिष्ठित होती है और उससे उसके चरित्र और ख्याति की हानि नहीं होती। निस्सन्देह किसी दिशा में सफलता प्राप्त करने की असमर्थता उसे अपनी हीन क्षमताओं के कारण ही होती है। परन्तु इस असफलता से शिक्षा लेकर वह ऐसे कार्य में अपने को लगाता है जो उसकी क्षमताओं के अनुरूप होता है और अन्ततोगत्वा वह सफलता प्राप्त करता है।

कारोबार में ईमानदारी बरतने की सराहना वे लोग भी करते हैं जो बेईमान होते हैं। वे व्यक्ति जो अपने व्यापारिक आदान-प्रदान में सचाई रखते हैं सच बोलते हैं और अपने वचन को पूरा करते हैं, उन्हें किसी अनिष्ट का भय नहीं हो सकता।

निर्भीकता व्यक्ति में ईमानदारी के साथ ही उत्पन्न होती है। ईमानदार व्यक्ति की नजर साफ पैनी होती है। वह अपने साथियों की नजर से नजर मिला सकता है। उसके भाषण में स्पष्टता और विश्वसनीयता होती है। झूठा आदमी हमेशा नजर चुराकर बातें करता है। उसकी आँखें चंचल और तिरछी होती हैं। वह दूसरों की आँखों से आँखें नहीं मिला सकता। उसके भाषण को सुनकर सन्देह होता है क्योंकि वह उलझा हुआ अविश्वसनीय होता है।

आदमी अपने दायित्वों को पूरा कर सका है तो उसे फिर किसी चीज का भय नहीं रहता। उसके सभी व्यापारिक सम्बन्ध सुरक्षित रहते हैं। उसकी शक्ती और समय समय की अस्थिरता को सहन कर सकते हैं। यदि ऐसा व्यक्ति विपत्तियों में फंसकर ऋणग्रस्त हो भी जाए तो भी सब लोग उसपर भरोसा करते हैं और धैर्य के साथ अपना ऋण चुकता होने की प्रतीक्षा करते हैं। बेईमान लोग अपना ऋण भुगतान से बचना चाहते हैं और सतत भय की भावना से पीड़ित रहते हैं। लेकिन ईमानदार लोग ऋणग्रस्त होना नहीं चाहते। परन्तु परिस्थितिवश ऐसा हो जाने पर भी वे भयभीत नहीं होते वरन् अपने प्रयत्नों को द्विगुणित करते हुए अपने ऋण को अदायगी करते हैं।

बेईमान लोग हमेशा ही भयभीत रहते हैं। उन्हें ऋण का भय नहीं होता उन्हें भय यह होता है कि उन्हें अपने ऋण की अदायगी

४ | क्रम-व्यवस्था

क्रम-व्यवस्था अनुक्रमिकता सिद्धान्त का एक ऐसा पद है जिसके अनुसार उद्भ्रांति को टाला जा सकता है। प्राकृतिक और सार्वभौम तत्त्व एक समुचित व्यवस्था के अनुसार अपने-अपने स्थान पर काम करते हैं जिसके कारण समस्त सृष्टि एक यंत्र से भी अधिक सम्पूर्णता के साथ काम करती है। यदि आकाशस्थित तत्त्व अव्यवस्थित हो जाएं तो समस्त सृष्टि का विनाश हो सकता है। इसी प्रकार यदि आदमी का कारोबार अव्यवस्थित हुआ तो उसकी समृद्धि का विनाश हो जाता है।

पेचीदा से पेचीदा संगठन केवल अनुक्रमिकता और पद्धति के अनुसार निर्मित होता है। कोई व्यापार अथवा समाज बिना क्रम व्यवस्था के विस्तार ग्रहण नहीं कर सकता। यह सिद्धान्त मुख्य रूप से सौदागर व्यापारी और संस्थाओं का संघ करने वालों के लिए अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण है।

ऐसे अनेक विभाग हो सकते हैं जहां एक अव्यवस्थित-क्रम रखने वाले व्यक्ति भी सफल हो सकते हैं हालांकि व्यवस्थित-क्रम व और ध्यान देने से उनकी सफलता और द्विगुणित हो सकती है लेकिन कोई व्यापार तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक उसे एक व्यवस्थापक के हाथों में न सौंप दिया जाए।

सभी विशाल व्यापारिक संस्थाएं एक सुनिश्चित व्यवस्था के अनुसार निर्मित होती हैं। व्यवस्था के अभाव व्यापारिक योग्यता

और मौलिकता विनाश को प्राप्त होती है। जटिल व्यापार तथा संगठन प्राकृतिक उपकरणों के समान ही जटिल होते हैं। इसलिए उदारतापूर्वक समस्त विवरणों की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए। अव्यवस्थित आदमी यह सोच लेता है कि मुख्य लक्ष्य को छोड़कर दूसरी बातों में लापरवाही बरती जा सकती है। परन्तु वह यह बात भूल जाता है कि साधन के प्रति उदासीन रहकर ध्येय की पूर्ति नहीं हो सकती। क्रम-विधान के अव्यवस्थित होने से संगठन नष्ट हो जाते हैं। विस्तृत क्रम-विधान के प्रति उदासीन रहने में किसी भी कार्य अथवा व्यापार-संस्था की उन्नति नहीं हो सकती।

जिन लोगों का जीवन क्रम अव्यवस्थित होता है वे समय और शक्ति का बहुत-बड़ा भाग फिजूल नष्ट करते हैं। चीजों की प्राप्ति के लिए इधर-उधर दौड़ना भी साधक हो सकता है बशर्ते कि आदमी व्यवस्थापूर्वक काम करे और उसी आधार पर सफलता भी प्राप्त की जा सकती है। अकर्मण्य लोग अपने वांछित साधनों को प्राप्त करने के लिए अनेक बार बहुत लम्बे समय तक भटकने पर बाधित होते हैं। दैनिक जीवन में वांछित वस्तुओं को पाने में जितना चिड़ापन बदमिजाजी और अवसाद हमारे मन में आता है उससे उतने ही परिमाण में शक्ति नष्ट हो जाती है। इस शक्ति के आधार पर एक बहुत बड़ा व्यापार खड़ा किया जा सकता है या किसी भी दिशा में बड़ी सफलता प्राप्त की जा सकती है।

व्यवस्थित लोग अपने समय और शक्ति का संचय करते हैं। वे कोई वस्तु नहीं खोते। इसलिए उन्हें किसी भी वस्तु की खोज नहीं करनी पड़ती। उनकी प्रत्येक वस्तु यथास्थान रखी होती है और वह चाहे अंधेरे में ही हो तत्काल उसे प्राप्त किया जा सकता है। ऐसे लोग शांत और धैर्यवान रह सकते हैं और बदमिजाजी तथा दूसरों पर दोषारोपण करने में खर्च होने वाली मानसिक शक्ति को वे किसी भी लाभकारी काम में खर्च कर सकते हैं।

व्यवस्था में एक विलक्षणता होती है जो अनायास अनेक चमत्कार कर सकती है। एक व्यवस्थित क्रम रखने वाला आदमी इतने थोड़े समय में इतने विशाल परिमाण में बिना थकान अनुभव

लिए काम कर सकता है कि देखने वाले आश्चर्यचकित रह जाएं।

व्यापार-जगत के प्रत्येक विभाग में व्यवस्था इतनी ही अधिक श्रमसाध्य है जितनी कि किसी सन्त द्वारा किए गए संकल्प की पूर्ति करना। और कभी-कभी छोटी से छोटी वस्तु के प्रति उदासीन रहने से भी समस्त व्यापारिक संभावनाओं के समाप्त होने की आशंका रहती है। व्यापारिक जगत् में व्यवस्था का नियम नितान्त आवश्यक है और जो व्यक्ति इस नियम का सम्यक् पालन करता है अपना समय और श्रम बचाता है।

मानवीय समाज के सभी स्थायी कृतित्व एक व्यवस्था के आधार पर टिके हुए हैं और वे इतने अपरिहार्य हैं कि यदि व्यवस्था समाप्त हो जाए तो उसके साथ प्रगति भी समाप्त हो जाएगी। उदाहरण के लिए साहित्य की महान उपलब्धियों पर विचार कीजिए। क्लासिक साहित्यकारों और महान प्रतिभाओं महान काव्यों असंख्य गद्य-कृतियों विशाल इतिहास-ग्रन्थों आत्मा को आन्दोलित करने वाली वक्तृताओं को लीजिए और इसके साथ ही मानव-समाज के सामाजिक व्यापार प्रवाह उसके कर्मों उसके विधि विधानों और पुस्तकीय ज्ञान के विशाल कोष को लीजिए। इन आश्चर्यजनक साधनों और भाषा की सम्पन्नताओं पर ध्यान देने से आपको प्रकट होगा कि ये चीजें अपनी रचना और परिपुष्टि के लिए केवल छब्बीस अक्षरों के व्यवस्थित विधान की ही ऋणी हैं (यह वक्तव्य केवल आंग्ल भाषा से ही सम्बन्धित है)। इस समस्त सफलता की पृष्ठभूमि में केवल कुछ सुनिश्चित नियमों के परिपालन से ही इतने विशाल और असीम परिमाणों को प्राप्त किया जा सकता है।

इसी प्रकार केवल दस अंकों के व्यवस्थित क्रम विधान के द्वारा ही गणित-सम्बन्धी आश्चर्यजनक सफलताएं प्राप्त की जा सकी हैं, और इसी प्रकार केवल थोड़े-से यांत्रिक नियमों का पालन करने से ही सहस्रों पुर्ज़ों वाली मशीनों का निर्माण किया जाना सम्भव हो सका है।

इस तरह हम देखते हैं कि उलझी हुई चीजों में व्यवस्था-क्रम ाप किस प्रकार सरलता उत्पन्न की जा सकती है किस प्रकार कठिन है

कठिन चीज को सरल किया जा सकता है और किस प्रकार व्यवस्था के केन्द्रीय सिद्धान्त से असंख्य विभिन्नताएं रखने वाली चीजों में समन्वय स्थापित किया है और किस प्रकार पूर्ण अनुक्रम के अनुसार उनकी गणना बिना किसी भ्रांति के की जा सकती है।

व्यवस्था सिद्धान्त का पालन करके ही वैज्ञानिक लोग दूरबीन से देखे जा सकने वाले सूक्ष्म व सूक्ष्म अणुओं तथा दूरबीन से ही देखे जा सकने वाले विशाल नक्षत्रों का वर्गीकरण और संख्याकरण करने में सफल हुए हैं। इसके सहारे लाखों पदार्थों में केवल एक पदार्थ पर कुछ ही क्षणों में इंगित किया जा सकता है। विज्ञान तथा व्यापार के प्रत्येक विभाग की इसी क्षमता के आधार पर तेजी के साथ जानकारी प्राप्त की जा सकती है और बहुत बड़े परिमाण में समय और श्रम को बचाया जा सकता है। हम बहुधा धार्मिक, राजनीतिक और व्यापारिक व्यवस्थाओं की बात करते हैं और विचार-क्रम, शिक्षा, बाजार, सरकार तथा इसी प्रकार की दूसरी चीजों की व्यवस्था पर विचार करते हैं और अन्त में इसी निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि मानवीय समाज को व्यवस्था के मूल आधार पर ही एकसाथ संयोजित किया जा सकता है।

वास्तव में प्रगति के महान मौलिक सिद्धान्तों में व्यवस्था का महत्वपूर्ण स्थान है। इसके आधार पर हम इस विशाल समग्रता को एक सूत्र में बांध सकते हैं। विश्व के विशाल जनसमुदाय में जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपना स्थान बनाने के लिए संघर्षशील है और एक दूसरे के उद्देश्यों की पूर्ति करने और स्वार्थसिद्धियों के लिए प्रयत्नशील है केवल क्रम-व्यवस्था के सहारे ही शान्तिपूर्वक सह-अस्तित्व सम्भव है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि व्यवस्था महत्ता से कितनी जुड़ी हुई है। प्रत्येक व्यक्ति की मति भिन्न होती है। व्यवस्था और अनुशासन का प्रशिक्षण भी सभी लोगों को प्राप्त नहीं होता। अपितु कुछ थोड़े लोग हैं जो इस सत्य को अनुभव करते हैं कि चाहे व्यापार हो चाहे कानून, धर्म, विज्ञान या राजनीति कोई भी क्षेत्र हो बिना सुनिश्चित नियमों का पालन किए विशाल जनसमुदाय को यथास्थान नहीं-

से और उपनिवेश का उपनिवेश से व्यवस्थापूर्वक संघर्ष स्थापित करने और वर्गीकरण करने से ही सभी चीज़ों में—व्यापार-संस्थाओं की सम्पूर्णता और विशालता में अभिवृद्धि लाई जा सकती है। जो व्यक्ति निरन्तर अपनी कार्यपद्धति का विकास करता रहता है, अपनी निर्णय-शक्ति को सुनियोजित करता है वह परिणामस्वरूप अधिक साधनसम्पन्न होता जाता है। ऐसा करने से वह अपनी कार्यपद्धति में सुधार करने के नये-नये तरीकों की ईजाद भी करता है। ऐसे व्यक्ति चाहे धार्मिक अथवा चारित्रिक व्यापारिक अथवा आध्यात्मिक किसी भी क्षेत्र में हों धरती के पराक्रमी पुत्रों में गिने जाते हैं और मानवता के संरक्षक और उन्नायक माने जाते हैं। व्यवस्थापूर्वक निर्माण करने वाला व्यक्ति सृष्टि करता है और उसका संवर्धन करता है जबकि अव्यवस्थित व्यक्ति विघटन और विनाश करता है। परन्तु यदि व्यवस्था और अनुशासन रखा जाए तो किसी भी व्यक्ति की शक्तियों के विकास चरित्र की सम्पूर्णता और उसके संगठन के प्रभाव अथवा व्यापार के क्षेत्र की सीमाएं निर्धारित नहीं की जा सकती। ऐसा व्यक्ति प्रत्येक वस्तु को यथास्थान रखता है। प्रत्येक विभाग का दायित्व एक विशेष व्यक्ति को सौंपता है और उसकी योग्यता और सम्पूर्णता के साथ प्रत्येक कार्य का वर्गीकरण करता है कि आवश्यकता पड़ने पर अपने कार्य से सम्बन्धित प्रत्येक विवरण की शीघ्र से शीघ्र परीक्षा कर सकता है और जांच-पड़ताल कर सकता है।

व्यवस्था के निर्माण के लिए निम्नलिखित चार तत्त्व आवश्यक हैं

१ तत्परता
२ शुद्धता
३ उपयोगिता
४ विशदता

तत्परता ही हमारे जीवन्त होने की परिचायक है। तत्परता की भावना से ही हम प्रत्येक परिस्थिति पर तात्कालिक रूप से अधिकार प्राप्त कर सकते हैं। व्यवस्थाप्रियता से ही यह क्षमता उत्पन्न और विकसित होती है। सफल सेनानायक वही होता है जो अपने शत्रु की अज्ञात योजनाओं का सामना करने की शक्ति से

सम्पन्न हो। इसी प्रकार प्रत्येक व्यापारी में अपने व्यापार पर प्रभाव डालने वाली अदृष्ट परिस्थितियों का सामना करने की तत्परता होनी चाहिए और किसी भी विचारवान व्यक्ति में यह सामर्थ्य होनी चाहिए कि वह किसी भी समस्या का समाधान खोज सके। जिन व्यक्तियों के हाथ हृदय और मस्तिष्क सदैव सजग और तत्पर होते हैं और जिन्हें यह मालूम होता है कि वे क्या कर रहे हैं और उस कार्य को वे व्यवस्थापूर्वक और दक्षतापूर्वक करते हैं अनायास उनकी गति शीघ्र से तीव्रतर होती जाती है उन्हें समृद्धि के बारे में उद्विग्न होने की आवश्यकता नहीं रहती। वे चाहें या न चाहें समृद्धि उन्हें प्राप्त होती ही है। वह उनका दरवाजा खटखटाती है और अपने व्यवस्थात्मक गुण से वे उसके वास्तविक अधिकारी बनते हैं।

शुद्धता और स्पष्टता का समस्त व्यापारिक उद्योग धन्धों में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह शुद्धता और स्पष्टता व्यवस्था-क्रम के सहारे ही सम्भव हो सकती है। जो व्यापारी अपने कारोबार में व्यवस्था कायम नहीं रख पाता अन्ततोगत्वा उसका व्यापार नष्ट हो जाता है।

अशुद्धि और अस्पष्टता ऐसे दोष हैं बहुधा सर्वसाधारण जिनके शिकार पाए जाते हैं। अशुद्धता इस बात की द्योतक है कि कार्यकर्ता में उचित मात्रा में आत्मानुशासन का अभाव है। केवल उच्चस्तरीय नैतिक संस्कृति ही आत्मानुशासन के रूप में प्रकट होती है। बहुधा लोगों में यह गुण नहीं पाया जाता। अशुद्धि करने वाला व्यक्ति अपने मालिक अथवा निर्देशक के आदेशों का पालन नहीं करता क्योंकि वह यह समझ लेता है कि जो कुछ वह कह रहा है वही श्रेष्ठ है। ऐसी मनोवृत्ति वाला मनुष्य अपनी असमर्थताओं पर कभी भी विजय प्राप्त नहीं कर सकता। उसकी बुद्धि अन्धी हो जाती है और वह उत्तरोत्तर हीन स्थिति को प्राप्त होता जाता है। व्यक्ति चाहे व्यापारी हो उद्योगपति हो अथवा ज्ञान और विचार के क्षेत्र में काम करने वाला हो यह स्थिति सभी जगह समान रूप से घटित होती है।

अशुद्धि का दुर्गुण (चूंकि इस दुर्गुण के परिणाम विध्वंसात्मक होते हैं इसलिए इसे बुराई ही गिना जाना चाहिए, हालांकि

है और उपनिवेश का उपनिवेश से व्यवस्थापूर्वक संपर्क स्थापित करने और वर्गीकरण करने से ही सभी चीजों में—व्यापार-संस्थाओं की सम्पूर्णता और विशालता में अभिवृद्धि लाई जा सकती है। जो व्यक्ति निरन्तर अपनी कार्यपद्धति का विकास करता रहता है अपनी निर्माण-शक्ति को सुनियोजित करता है वह परिणामस्वरूप अधिक साधनसम्पन्न होता जाता है। ऐसा करने से वह अपनी कार्यपद्धति में सुधार करने के नये-नये तरीकों की ईजाद भी करता है। ऐसे व्यक्ति चाहे धार्मिक अथवा चारित्रिक व्यापारिक अथवा आध्यात्मिक किसी भी क्षेत्र में हों धरती के पराक्रमी पुरुषों में गिने जाते हैं और मानवता के संरक्षक और उन्नायक माने जाते हैं। व्यवस्थापूर्वक निर्माण करने वाला व्यक्ति सृष्टि करता है और उसका संवर्धन करता है जबकि अव्यवस्थित व्यक्ति विघटन और विनाश करता है। परन्तु यदि व्यवस्था और अनुशासन रखा जाए तो किसी भी व्यक्ति की शक्तियों के विकास चरित्र की सम्पूर्णता और उसके संगठन के प्रभाव अथवा व्यापार के क्षेत्र की सीमाएं निर्धारित नहीं की जा सकती। ऐसा व्यक्ति प्रत्येक वस्तु को यथास्थान रखता है। प्रत्येक विभाग का दायित्व एक विशेष व्यक्ति को सौंपता है और उसकी योग्यता और सम्पूर्णता के साथ प्रत्येक कार्य का वर्गीकरण करता है कि आवश्यकता पड़ने पर अपने कार्य से सम्बन्धित प्रत्येक विवरण की शीघ्र से शीघ्र परीक्षा कर सकता है और जांच-पड़ताल कर सकता है।

व्यवस्था के निर्माण के लिए निम्नलिखित चार तत्त्व आवश्यक है

१ तत्परता
२ सुव्रता
३ उपयोगिता
४ विशदता

तत्परता ही हमारे जीवन्त होने की परिचायक है। आवश्यकता की भावना से ही हम प्रत्येक परिस्थिति पर तात्कालिक रूप से अधिकार प्राप्त कर सकते हैं। व्यवस्थाप्रियता से ही यह क्षमता उत्पन्न और विकसित होती है। सफल सेनानायक वही होता है जो अपने शत्रु की अकस्मात योजनाओं का सामना करने की शक्ति से

सम्पन्न हो। इसी प्रकार प्रत्येक व्यापारी में अपने व्यापार पर प्रभाव डालने वाली अदृष्ट परिस्थितियों का सामना करने की तत्परता होनी चाहिए और किसी भी विचारवान व्यक्ति में यह सामर्थ्य होनी चाहिए कि वह किसी भी समस्या का समाधान खोज सके। जिन व्यक्तियों के हाथ, हृदय और मस्तिष्क सबल सतर्क और तत्पर होते हैं और जिन्हें यह मालूम होता है कि वे क्या कर रहे हैं और उस कार्य को वे व्यवस्थापूर्वक और दक्षतापूर्वक करते हैं, स्वभावतः उनकी गति तीव्र से तीव्रतर होती जाती है, उन्हें समृद्धि के बारे में उद्विग्न होने की आवश्यकता नहीं रहती। वे चाहें या न चाहें समृद्धि उन्हें प्राप्त होती ही है। यह उनका बराबर बटवारा है और अपने स्वत्वात्मक गुण से वे उसके वास्तविक अधिकारी बनते हैं।

स्वच्छता और स्पष्टता का समस्त व्यापारिक उद्योग-धन्धों में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह शुद्धता और स्पष्टता व्यवस्था-क्रम के सहारे ही सम्भव हो सकती है। जो व्यापारी अपने कारोबार में व्यवस्था कायम नहीं रख पाता अन्ततोगत्वा उसका व्यापार नष्ट हो जाता है।

अशुद्धि और अस्पष्टता ऐसे दोष हैं बहुधा सर्वसाधारण जिनके शिकार पाए जाते हैं। अशुद्धता इस बात की द्योतक है कि कार्यकर्ता में उचित मात्रा में आत्मानुशासन का अभाव है। केवल उच्चस्तरीय नैतिक संस्कृति ही आत्मानुशासन के रूप में प्रकट होती है। बहुधा लोगों में यह गुण नहीं पाया जाता। अशुद्धि करने वाला व्यक्ति अपने मालिक अथवा निरीक्षक के आदेशों का पालन नहीं करता क्योंकि वह यह समझ बैठा है कि जो कुछ वह कर रहा है वही श्रेष्ठ है। ऐसी मनोवृत्ति वाला मनुष्य अपनी असमर्थताओं पर कभी भी विजय प्राप्त नहीं कर सकता। उसकी बुद्धि अन्धी हो जाती है और वह उत्तरोत्तर हीन स्थिति को प्राप्त होता जाता है। व्यक्ति चाहे व्यापारी हो उद्योगपति हो अथवा ज्ञान और विचार के क्षेत्र में काम करने वाला हो यह स्थिति सभी जगह समान रूप से घटित होती है।

अशुद्धि या दुर्गुण (चूंकि इस दुर्गुण के परिणाम विध्वंसात्मक होते हैं इसलिए इसे बुराई ही कहा जाना चाहिए, इत्यादि यह